श्री भक्तामर विधान

भोंयरे वाले बड़े बाबा

जतारा भोंयरे से प्राप्त
हजारों वर्ष प्राचीन चतुर्थकालीन आदिनाथ भगवान

रचयिता :
आचार्य विमर्शसागर मुनि

सच्चे जैन का एक ही पंथ-जिनागम पंथ

जयदु जिणागम पंथो

जिनागम पंथ जयवंत हो

इस पंचमकाल में कर्म निर्जरा का ससक्त साधन है भक्ति। भक्ति से अनेकानेक अतिशयों की गौरव गाथा जिनागम में वर्णित है। उभय लोक संबंधी सभी प्रकार के दुःखों की समूल नाशक जिनभक्ति के अतिशय को प्राप्त आचार्य श्री पूज्यपाद स्वामी कृत 'शान्तिभक्ति' की सहत सिद्धि प्राप्त करनेवाले, देवों से पूजित, वर्तमान के भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज का वर्तमान आचार्य परम्परा में विशिष्ट स्थान है। नम्रीभूत देवों के द्वारा पूजित 'भावलिंगी संत' के रूप में आपकी पहिचान है।

तेरह-बीस पंथ आदि पंथों को जिनागम बाह्य निरुपति कर सामाजिक एकता के लिये अनादि-अनधिन जिनागम पंथ का उद्घोष करने वाले आप सच्चे करुणावंत संत हैं। श्री आदिनाथ भगवान की भक्ति से सराबोर और पूज्य आचार्य श्री के सुंदर पद्यानुवाद से सजी हुई यह श्री भक्तामर विधान नामक अनुपम कृति का प्रकाशन करते हुए हमें अपार हर्ष की अनुभूति हो रही है।

– प्रकाशक

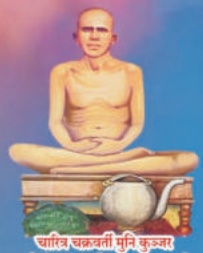

श्री शान्तिनाथ भगवान
(अहार जी के बड़े बाबा)

चारित्र चक्रवर्ती मुनि कुञ्जर
आचार्य श्री 108 आदिसागर जी महामुनिराज

तीर्थभक्त शिरोमणि, समाधि सम्राट
आचार्य श्री 108 महावीरकीर्ति जी महामुनिराज

जिनागम पंथ अनुगामी वंदनीय आचार्य परम्परा

वात्सल्य रत्नाकर
आचार्य श्री 108 विमलसागर जी महामुनिराज

तपस्वी सम्राट आचार्य
श्री 108 सन्मतिसागर जी महामुनिराज

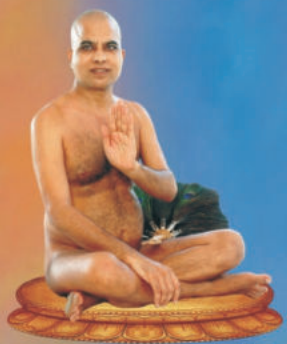

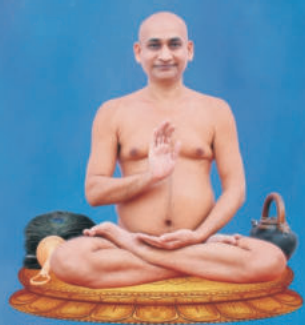

परम पूज्य युग प्रतिक्रमण प्रवर्तक, शुद्धोपयोगी संत
सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनिराज

"जीवन है पानी की बूँद" महाकाव्य के मूल रचयिता, "विमर्श लिपि" के सृजेता,
जिनागम पंथ प्रवर्तक, अहार जी के छोटे बाबा, प.पू. आदर्श महाकवि, राष्ट्रयोगी
भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागर जी महामुनिराज

website : www.bhavlingisant.com
youtube : Jinagam Panth Jain Channle

जिनागम पंथ ग्रंथमाला : ग्रंथांक–20

(स्वर्णिम विमर्शोत्सव एवं रजत संयमोत्सव वर्ष–2022–23 की मंगल प्रस्तुति)

श्री भक्तामर विधान

रचयिता :
आचार्य विमर्शसागर मुनि

जिनागम पंथ प्रकाशन

ज्ञानावरण कर्म के आस्रव का कारण

.. शास्त्र विक्रय.. ज्ञानावरणस्यास्रवाः श्रुतात्स्याच्छ्रुतकेवली।

शास्त्र विक्रय ज्ञानावरण कर्म के आस्रव का कारण है तथा शास्त्रदान से श्रुतकेवली होता है ऐसा आगम वाक्य है।

जिनागम पंथ ग्रंथमाला से प्रकाशित श्रुत साहित्य का विक्रय नहीं किया जाता। सभी स्वाध्यायी जीवों के लिए निःशुल्क उपलब्ध कराया जाता है।

जिनागम पंथ ग्रंथमाला : ग्रंथांक–20

कृति	:	श्री भक्तामर विधान
मूल कृतिकार	:	आचार्य श्री मानतुंग स्वामी जी
शुभाशीष	:	प.पू. शुद्धोपयोगीसंत श्रमणाचार्य श्री विरागसार जी महामुनिराज
पद्यानुवाद	:	आचार्य विमर्शसागर मुनि
प्रस्तुति	:	बा.ब्र. विशु दीदी
प्रकाशक	:	जिनागम पंथ ग्रंथमाला
संस्करण	:	प्रथम, 2023

© **राष्ट्रीय विमर्श जागृति मंच**

प्राप्ति स्थान :

जिनागम पंथ ग्रंथालय
छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मो. 9425146667

जिनागम पंथ ग्रंथालय
श्री महावीर दि. जैन मंदिर
श्रमणपुर, लखनादौन (म.प्र.)
मो. 9425146667

राष्ट्रीय विमर्श जागृति मंच
भिण्ड (म.प्र.)
मो. 9826217291

जिनागम पंथ ग्रंथालय
डॉ. विश्वजीत कोटिया
आगरा (उ.प्र.)
मो. 9412163166

जिनागम पंथ ग्रंथालय
अरिन्जय जैन
दिल्ली
मो. 9710099002

मुद्रक :
ज्योति ग्राफिक्स, जयपुर
मो. 8290526049

शास्त्रदानकर्ता

*** श्रीमती पुष्पा–सनतकुमार माँची, जतारा**
*** श्रीमती मनोरमा–देवेन्द्र कुमार माँची, जतारा**
*** श्रीमती मोनिका–आशीष कुमार माँची, जतारा**

आद्याक्षर

भारतवर्ष की सनातन संस्कृति के महोन्नत भाल पर दैदीप्यमान तिलक की भाँति चारुत्व को प्राप्त दिगम्बर जैन श्रमण परम्परा सदैव से आर्यजनों द्वारा शेषाक्षत की भाँति वंदनीय रही है। महानता को सही मायनों में जीवंत करनेवाले महनीय तपोधनों की गुणाढ्य संतति में समय-समय पर अनेकों धुरंधर जैनाचार्यों का उद्भव हुआ जिन्होंने अपनी दर्पण सम अविकार वृत्ति, अनुत्तम ज्ञान साधना एवं सुरोपासित अटल श्रद्धान् के द्वारा समय के पटल पर अपनी यश प्रशस्तियाँ अंकित की हैं। इन्ही महात्माओं के सुवंश में अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्त्व से 21वीं सदी को गौरवान्वित करनेवाले चर्या और चिंतन के धनी, साधनापथ पर कदम दर कदम अपनी साधना से अनुमार्गियों के लिये नूतन प्रकाश स्तम्भ स्थापित करनेवाले श्रमणकुल से वंदनीय, देव कुलार्चनीय परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागर जी महामुनिराज एक असाधारण चुम्बकीय व्यक्तित्व के धनी आचार्य हैं। जिनकी परम वीतरागी सौम्यमुद्रा का दर्शन मात्र ही भव्यों के जीवन में वैराग्य का अंकुरण करनेवाला है। आपके वात्सल्य, अनुशासन और निर्दोष चर्या से प्रभावित हो अनेकों शिवेक्षु आत्मविज्ञान के साथ मोक्षमार्ग की साधना में आपके सुपथगामी हुये हैं। आपके श्रेष्ठ निर्यापकाचार्यत्व में अनेकों श्रमण-श्रमणी एवं भव्य मुमुक्षुओं ने सल्लेखना पूर्वक उत्तम समाधि की साधना की है।

जिनका दिव्य पादमूल श्रेष्ठतम वरदानों का आनंद स्थल है, ऐसे प्रज्ञामनीषी पूज्य आचार्य श्री का यशोमयी सृजत्व भी युगपरिवर्तन की ऊर्जा से सम्पन्न है, जो दिग्भ्रमित जनमानस को समीचीन पथ का पाथेय प्रदान करता है। पूज्य आचार्य प्रवर ने अपने साहित्य में हर दृष्टिकोण से धार्मिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, पारिवारिक और मानवीय मूल्यों के समुन्नयन का संपुट प्रदान किया है। पूज्यश्री के साहित्य के हर पृष्ट पर होती है सरसता, हर लाइन में पिरो देते हैं वो रोचकता, हर शब्द करता है अंतस् को आन्दोलित और अक्षर-अक्षर में छिपा होता है जीवन विकास का परम संदेश।

''**जीवन है पानी की बूँद**'' **महाकाव्य**–पूज्यश्री की लेखनी से हिन्दी काव्यजगत का सर्वाधिक लोकप्रिय, कुरल शैली का महाकाव्य 'जीवन है पानी की बूँद' सृजित हुआ। यह महाकाव्य इतना अधिक लोकप्रिय है कि देश-विदेश में जैन समुदाय का कोई भी धार्मिक, सामाजिक या सांस्कृतिक कार्यक्रम हो, जबतक उसमें इस अमर काव्य की पंक्तियाँ न गुनगुनाई जायें तबतक वह अनुष्ठान अधूरा सा प्रतीत होता है।

दिगम्बर एवं श्वेताम्बर परम्परा के अनेकों साधु भगवंत, त्यागीवृन्द, विद्वान् और संगीतकार इस महाकाव्य पर नूतन-नूतन हजारों छंद लिखकर अपनी काव्य प्रतिभा को धन्य कर रहे हैं, यह इस कालजयी महाकाव्य की लोकप्रियता का एक सशक्त उदाहरण है। इस महाकाव्य पर अनेकों शोधार्थी P.H.D. कर रहे हैं। पूज्य श्री के इस महाकाव्य पर देश के मूर्धन्य जैन, अजैन विद्वानों एवं साहित्यकारों द्वारा अनेक विद्वत् संगोष्ठियाँ सम्पन्न की जा चुकी हैं।

हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, उर्दू, अंग्रेजी, राजस्थानी, हाड़ौती, बुंदेली, अवधि, आदि अनेक भाषाओं के ज्ञाता एवं हिन्दी के साथ-साथ प्राकृत, संस्कृत, उर्दू आदि अनेक भाषाओं में साधिकार कलम चलानेवाले, संत परम्परा के वरिष्ठ साहित्यकार परम पूज्यनीय भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज द्वारा जहाँ एक ओर जैनदर्शन के अनेकों मूलग्रंथों का मौलिक छंदों में पद्यानुवाद कर आचार्य भगवन् कुंदकुंद और पूज्यपाद की परम्परा को पुष्ट किया गया है वहीं दूसरी ओर उनकी लेखनी से सृजित सैकडों बोधप्रद कवितायें, आध्यात्मिक भजन एवं सवैया, मुक्तक, हाइकू, नई कविता आदि अनेक विधाओं पर सैकड़ों प्रकीर्णक रचनायें हिन्दी काव्य परम्परा के कोष की समृद्धि बन पड़ी हैं। सिर्फ हिन्दी ही नहीं पूज्य आचार्य श्री ने उर्दू में साधिक 200 गजलों का प्रणयन कर उर्दू साहित्य में भी अद्भुत कीर्तिमान स्थापित किया है।

अभीक्ष्ण ज्ञान साधना का अमृतफल 'अप्पोदया' प्राकृत टीका– श्रुत संवर्धन के लिये समर्पित पूज्य आचार्य श्री की प्रज्ञ लेखनी ने पूज्य आचार्य भगवन् श्री अमितगति स्वामी कृत सहस्र वर्ष प्राचीन 'श्री योगसार प्राभृत' ग्रंथ पर प्राकृत भाषा में ''**अप्पोदया**'' नामक सहस्र पृष्ठीय वृहद टीका का सृजन कर श्रुत संस्कृति के क्षेत्र में एक स्वर्णिम इतिहास रचा है। देशभर के मूर्धन्य विद्वानों एवं श्रमण जगत के द्वारा समादृत आपकी यह ''**अप्पोदया**'' प्राकृत टीका अध्यात्म का एक वृहद कोष है, जो आपकी अभीक्ष्ण ज्ञान साधना का ही अमृतफल है।

बहु आयामी व्यक्तित्त्व के धनी पूज्य गुरुदेव के विराट कृतित्व में अनेक विधायें केली करती हैं। पूज्य आचार्यश्री ने जहाँ एक ओर अपने लेखन से आरातिय श्रुत को बल प्रदान किया है, वहीं दूजी ओर '**विमर्श लिपि**' एवं '**विमर्श अंकलिपि**' का सृजन कर समुचि श्रमण संस्कृति का मस्तक ऊँचा किया है। साथ ही पूर्णत: मौलिक शब्द, व्याकरण आदि से सम्पन्न नवीन भाषा '**विमर्श एम्बिशा**' का निर्माण कर आपने इतिहास के पृष्ठों पर एक अमिट लेख लिख दिया है।

जैन एकता के लिये दिव्यावदान– पूज्य आचार्य श्री ने **''जिनागम पंथ जयवंत हो''** का नारा देकर संतवाद पंथवाद और जातिवाद के नाम पर बिखरती जैन संस्कृति को एकता के सूत्र में बाँधने का स्तुत्य कार्य किया है।

पूज्य आचार्य श्री का काव्य सर्जना में श्रम कौशल वरेण्य है। आपकी एक प्रेरक काव्य रचना **''देश और धर्म के लिये जिओ''** को मध्यप्रदेश शिक्षा बोर्ड द्वारा कक्षा 11 की हिन्दी सामान्य की पुस्तक **'मकरन्द'** के पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है, यह श्रमण संस्कृति के स्वाभिमान का विषय है।

सिद्धक्षेत्र श्री अहारजी में आपश्री को अपनी निर्मल साधना से पंचमकाल में दुर्लभतम श्री शान्तिभक्ति की महान सिद्धि प्राप्त हुई, जिससे प्रभावित हो यक्षों द्वारा की गई महापूजा और नाम दिया गया **'भावलिंगी संत'** एवं **'अहार जी के छोटे बाबा'**। यह सम्पूर्ण कथानक आपकी सच्ची भावसाधना का अमिट शिलालेख है।

दिगम्बर श्रमण परम्परा के महान प्रतिष्ठाचार्य, पूज्य आचार्य भगवन् जैसे महान् संत जगत में विरलप्राय: हैं। अनेकान्तिनी प्रतिभा के ससक्त हस्ताक्षर, प्रेम, दया, करुणा, वात्सल्य की अपरिसीम संवेदनाओं से छलकता हृदय, सरलता और सहजता का प्रतिनिधित्व करता जीवन, महानता के सर्वोच्च शिखर पर लघुता के स्वर ये पूज्य आचार्यश्री के जीवन की कुछ ऐसी दुर्लभतम विशेषतायें हैं जो उन्हें सहज ही आम संतों की भीड़ में एक जुदा संत की पहिचान देती हैं।

परम पूज्यनीय शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री 108 विरागसागर जी महामुनिराज के अग्रगण्य शिष्यों में परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागर जी महामुनिराज एक अद्वितीय प्रतिभाशील सहज साधक हैं। गुरुआज्ञा, अनुशासन और स्वयोग्यता से आपने अपनी निर्वाण दीक्षा के 25 वर्षों में जो कद प्राप्त किया है, वहाँ तक कोई विरला संत ही पहुँच पाता है। आपने अपनी साधनाकाल के विगत 27 वर्षों में पूरे देश में परिभ्रमण कर अनेकों पंचकल्याणक प्रतिष्ठायें, वेदी प्रतिष्ठायें, श्री कल्पद्रुम, समोशरण, इन्द्रध्वज, सिद्धचक्र आदि वृहद स्तरीय विधान, अनेक जिनालयों का जीर्णोद्धार, संत शालाओं का निर्माण, ग्रंथालयों की स्थापना आदि कराके जिनागम पंथ का ध्वज घर–घर में स्थापित किया है।

पूज्य आचार्यश्री कहते हैं– जिनवाणी हमारी माँ है, उसपर मूल्य अंकित कर उसका विक्रय नहीं करना चाहिये। जिनवाणी का विक्रय करने से ज्ञानावरणी कर्म का आस्रव बंध होता है। अत: पूज्य आचार्य श्री की प्रेरणा से **''जिनागम पंथ ग्रंथमाला''**

की स्थापना की गई है। इस ग्रंथमाला से प्रकाशित साहित्य साधु भगवंतों एवं स्वाध्यायी जनों के लिये नि:शुल्क भेंट किया जाता है। आचार्यश्री की यह सद्प्रेरणा निश्चित ही समाज को नया चिंतन एवं नई दिशा देगी।

आपके शुभाशीष से ''**राष्ट्रीय विमर्श जागृति मंच (रजि.)**'' एवं ''**जिनागम पंथी श्रावक संघ**'' ये दो संगठन देशभर में मानव सेवा, देशसेवा और धर्म प्रभावना के क्षेत्र में समाज की महत् उपलब्धि बन चुके हैं।

आपके सानिध्य में आयोजित, जिनागम शिक्षण शिविर, विमर्श कैम्प, पूजन प्रशिक्षण शिविर (आनंद महोत्सव), विद्वत् संगोष्ठियाँ, साहित्यकार सम्मेलन, मंच के सेमिनार आदि के माध्यम से समाज में संस्कारों का शंखनाद किया जा रहा है।

आपकी रजत साधना के ये पच्चीस वर्ष निश्चित रूप से देश, समाज, धर्म और समुचि मानवता के लिये किसी दिव्य वरदान से कम नहीं है।

अत: आपके ''**रजत संयमोत्सव**'' एवं ''**स्वर्णिम विमर्श उत्सव**'' के अवसर पर अखिल भारतीय शास्त्री परिषद, विमर्श गुरुभक्तों एवं शिष्यों ने यह भाव सँजोया है कि आपका समूचा साहित्य प्रकाशित हो ताकि जन-जन आपके अवदान से लाभान्वित हो सकें, साथ ही कुछ प्राचीन आचार्यों के मूल ग्रंथों के प्रकाशन का भी बीड़ा उठाया है। यह समूचा साहित्य प्रकाशन का कार्य ''**जिनागम पंथ ग्रंथमाला**'' के तहत सम्पन्न किया जा रहा है। पूज्य आचार्य श्री का यह साहित्य जन-जन के मन को आलोकित करता रहे। इसी सुमंगल भावना के साथ शब्द विराम।

चूँकि ग्रंथ प्रकाशन में संशोधन एवं संपादन का कार्य अत्यंत श्रमसाध्य है, पूज्य गुरुदेव के इस पावन युगल प्रसंग पर प्रकाशित सभी शास्त्रों की प्रूफ रीडिंग एवं साजसज्जा के कार्य में संघस्थ मुनिराज, आर्यिका मातायें, त्यागी व्रति, एवं विद्वत् वर्ग ने अपना अमूल्य समय देकर श्रुतसेवा के इस कार्य में श्लाघनीय योगदान दिया है, जो उनकी गुरुभक्ति और श्रुतभक्ति का अनुपम उदाहरण है। **जिनागम पंथ ग्रंथमाला** एवं **ग्रंथ प्रकाशन समिति** आप सभी के प्रति हृदय से आभार ज्ञापित करती है।

परिचय की वीथिकाओं में

भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज

लौकिक यात्रा

पूर्व नाम	:	श्री राकेश कुमार जैन
पिता	:	पं. श्री सनत कुमार जैन (दो प्रतिमाधारी, समाधिस्थ)
माता	:	श्रीमती भगवती जैन (आपके ही कर कमलों से दीक्षित एवं समाधिस्थ पू. आर्यिका विहान्तश्री माताजी)
जन्म स्थान	:	जतारा, जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.)
जन्म तिथि	:	मार्गशीर्ष कृष्णा पंचमी सं. 2030
जन्म दिनांक	:	15 नवम्बर, 1973 दिन : गुरुवार
शिक्षा	:	बी.एस.सी. (बायलॉजी)
भ्राता	:	दो (अग्रज-राजेश जैन, अनुज-चक्रेश जैन)
भगिनी	:	दो (अग्रजा-श्रीमती कमला जैन, अनुजा-बा.ब्र. महिमा दीदी (संघस्थ)
विवाह	:	बाल ब्रह्मचारी
खेल	:	बैडमिंटन, शतरंज (विशेषता—दोनों खेल जिनसे सीखे उन्हीं के साथ फाईनल खेलते हुए चैंपियन कप विजेता)
सामाजिक सेवा	:	मंत्री— श्री दिगम्बर जैन नवयुवक संघ, जतारा
रुचि	:	अध्ययन, संगीत, पेंटिंग
सांस्कृतिक रुचि	:	अनेक धार्मिक, सामाजिक नाट्य मंचन
करुणा भाव	:	बचपन में एक गरीब अंधे भिखारी को अक्सर पैसे दान देना।

परमार्थ यात्रा

आचार्यश्री विरागसागर जी महाराज के प्रथम बार जतारा नगर में आयोजित पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं त्रयगजरथ महोत्सव में समाज की ओर से निवेदन के अवसर पर दर्शन हुये। आचार्यश्री की वात्सल्यता ने अत्यंत प्रभावित किया। (सन्-1995, स्थान-मोराजी सागर, म.प्र.)

त्याग के संस्कार : आचार्यश्री विरागसागर जी महाराज की जतारा नगर में वैयावृत्ति के समय आजीवन आलू, प्याज एवं रात्रि भोजन के त्याग से गृह त्याग की भावना।

ब्रह्मचर्य व्रत : आचार्यश्री विरागसागर जी महाराज ससंघ का विहार कराते हुए सिद्धक्षेत्र श्री अहार जी में भगवान् शान्तिनाथ की चरणछाया में फाल्गुन कृष्णा त्रयोदशी, सोमवार संवत् 2051, दिनांक 27 फरवरी 1995 को आचार्यश्री से दो वर्ष का ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया।

सामायिक प्रतिमा : आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज से पार्श्वनाथ मोक्ष सप्तमी के अवसर पर सामायिक प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। स्थान- क्षेत्रपाल जी ललितपुर (उ.प्र.), दिनांक 3 अगस्त 1995, गुरुवार।

ऐलक दीक्षा : फाल्गुन शुक्ला पंचमी, शुक्रवार, संवत् 2052, 23 फरवरी 1996 को

देवेन्द्रनगर (पन्ना) में तपकल्याणक के दिन आचार्यश्री विरागसागरजी महाराज से ऐलक दीक्षा ग्रहण की और नाम पाया ऐलक विमर्शसागर जी।

मुनि दीक्षा : पौष कृष्णा 11, संवत् 2055, सोमवार दिनांक 14 दिसम्बर 1998 को अतिशय क्षेत्र बरासो (भिण्ड) में आचार्यश्री विरागसागरजी से मुनिदीक्षा ग्रहण की और मुनि विमर्शसागर नाम पाया।

आचार्य पद घोषित : आचार्यश्री विरागसागरजी ने 13 फरवरी 2005, रविवार को कुन्थुगिरी में गणधराचार्य श्री कुन्थुसागर जी सहित 14 आचार्य एवं 200 पिच्छिओं के मध्य आचार्य पद घोषित किया।

आचार्य पद संस्कार : मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी सं. 2067, रविवार, दिनांक 12 दिसम्बर 2010 को बांसवाड़ा (राजस्थान) में आचार्यश्री विरागसागरजी ने आचार्य पद के संस्कार किये और नाम दिया आचार्य विमर्शसागर जी।

शान्ति भक्ति की सिद्धि : 25 दिसम्बर 2015, सिद्धक्षेत्र अहार जी में भगवान् श्री शान्तिनाथ स्वामी के अतिशयकारी पादमूल में, संघस्थ बा.ब्र. विशु दीदी की असाध्य बीमारी (रोग) से करुणान्वित हो पूज्य गुरुदेव ने जब लगभग 1400 वर्ष प्राचीन आचार्य पूज्यपाद स्वामी रचित शान्त्यष्टक का भावपूर्वक पाठ किया तो देखते ही देखते क्षण मात्र में दीदी असाध्य रोग से मुक्त हो गईं। तब क्षेत्र के यक्ष-यक्षणियों द्वारा गुरुदेव की महापूजा की गई और सूचित किया कि आपको अपनी निर्मल साधना से इस पंचमकाल में दुर्लभतम शान्ति भक्ति की सहज ही सिद्धि प्राप्त हुई है। साथ ही पूज्य गुरुदेव को **'भावलिंगी संत', 'अहार जी के छोटे बाबा', 'शान्तिप्रभु के लघुनंदन'** आदि संज्ञायें प्रदान कीं।

शब्दालंकार : रत्नत्रय के ऊर्जस्वी और तेजस्वी अलंकारों से जिनकी आत्मा का एक-एक प्रदेश अलंकृत है। सत्यम्-शिवम्-सुंदरम् की दिव्य रश्मियों से आलोकित पूज्य गुरुवर विमर्शसागर जी महामुनिराज का विराट व्यक्तित्व किन्हीं शब्दालंकारों का मोहताज नहीं है। फिर भी जगह-जगह की धर्मप्राण-समाजों, ऊर्जस्वी संगठनों एवं यशस्वी व्यक्तियों ने नाना अवसरों पर अपने मनोभावों को शब्दों में समेट कर गुरु चरणों में कई शब्दालंकार प्रस्तुत किये हैं और अपना सौभाग्य माना है।

वात्सल्य शिरोमणि—संत के जीवन का सबसे प्रभावी गुण होता है उसका अकृत्रिम वात्सल्य भाव, पूज्य गुरुवर को यह वात्सल्य की अमूल्य सम्पदा, गुरु परम्परा से विरासत में ही प्राप्त हुई है, वर्षायोग 2008 के उपरान्त उत्तरप्रदेश के आगरा नगर में पंचकल्याणक के अवसर पर आगरा समाज ने आपके वात्सल्य से प्रभावित होकर आपको "**वात्सल्य शिरोमणि**" के अलंकार से विभूषित किया।

श्रमण गौरव—प.पू. भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज की अनुशासन के सुडौल साँचे में ढली निर्दोष श्रमण चर्या वर्तमान में श्रमण जगत को गौरवान्वित करती है, पूज्य श्री की आगमानुसारी चर्या से प्रभावित होकर एटा-2009 वर्षायोग में शाकाहार परिषद ने आपको "**श्रमण गौरव**" की उपाधि से अलंकृत किया और अपना सौभाग्य बढ़ाया।

वात्सल्य सिन्धु—वात्सल्य और करुणा के दो पावन तटों के बीच प्रवाहित गुरुवर की जीवन मंदाकिनी जनमानस की सतह पर बिखरी घृणा, बैर, कटुता की कलुषता को सहज ही धो डालती है।

पूज्यश्री के इसी गुण आकर्षण से अनुग्रहीत हो, एटा वर्षायोग-2009 में अखिल भारतीय कवि सम्मेलन के अवसर पर राजेश जैन गीतकार आदि कवि समूह ने गुरुवर को "**वात्सल्य सिन्धु**" का भाव वंदन अर्पित कर सौभाग्य माना।

आचार्य पुंगव—संतवाद, पंथवाद, जातिवाद और ग्रंथवाद की वैचारिक संकीर्णताओं से असम्पृक्त पूज्य श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महाराज की सिर्फ चर्या ही अनुकरणीय नहीं, अपितु उनका चतुरानुयोग का निर्मल ज्ञान भी ज्येष्ठ है। ऐसे ज्ञान और चर्या में श्रेष्ठ संत के महिमावंत व्यक्तित्व से प्रभावित होकर पूज्य गुरुदेव की गृहनगरी जतारा जैन समाज ने पंचकल्याणक 2012 के अवसर पर आपको "**आचार्य पुंगव**" की उपाधि से भूषित कर अपना मान बढ़ाया।

राष्ट्रयोगी—पूज्य गुरुवर का "**वैचारिक वैभव**" सिर्फ जैनों तक सीमित नहीं अपितु हर जाति का व्यक्ति उसे अपनी विरासत मानता है। अत: बिजयनगर (राज.) वर्षायोग-2012 में राष्ट्रवादी संस्था भारत विकास परिषद द्वारा आयोजित "दिव्य संस्कार प्रवचन माला" में आपके राष्ट्रोन्नति से समृद्ध उपदेशों को सुनकर आपको "**राष्ट्रयोगी**" का अलंकार समर्पित किया गया।

सर्वोदयी संत—पूज्य आचार्यश्री की निर्भीक शैली जनमानस को सहज ही अपनी ओर आकर्षित कर लेती है तभी तो पूज्यवर के प्रवचनों में जैनों के साथ-साथ अजैन भी देशना को सुनकर आनंदित होते हैं, आपके उपदेशों में प्राणीमात्र के उदय की दिव्य चमक नजर आती है, तभी तो बिजयनगर (राज.) दिगम्बर जैन समाज ने 2012 वर्षायोग में आपको "**सर्वोदयी संत**" की उपाधि से नवाजा।

प्रज्ञामनीषी—श्रुताराधना के अनुपम आराधक, जिनेन्द्रवाणी के गहन प्रचारक, वाणी और कलम के अनूठे जादूगर पूज्यश्री की तीक्ष्ण प्रज्ञा और निर्मल ज्ञान से प्रभावित होकर, अखिल भारतीय आध्यात्मिक कवि सम्मेलन बिजयनगर (राज.)- 2012 में कविगण एवं भारत विकास परिषद द्वारा आपको "**प्रज्ञामनीषी**" की उपाधि से विभूषित किया गया।

राष्ट्रहितैषी—उत्तरप्रदेश के एटा नगर में स्वामी विवेकानन्द की 150वीं जन्म जयन्ती के अवसर पर विश्व हिन्दू परिषद के तत्त्वावधान में आयोजित अखिल भारतीय युवा सम्मेलन में पूज्य गुरुदेव के राष्ट्रहित में समर्पित देशोन्नति परक अमूल्य चिंतन से प्रभावित हो विश्व हिन्दू परिषद द्वारा सन् 2013 में आपको "**राष्ट्रहितैषी**" अलंकरण से अलंकृत किया गया।

आदर्श महाकवि—सम्प्रतिकाल में कुरल शैली का सैकड़ों विषयों को हृदयंगम करनेवाला अमर महाकाव्य "जीवन है पानी की बूँद" के शब्दशिल्पी, भजन, ग़ज़ल, मुक्तक, कविता, नई कविता, पद्यानुवाद, सवैया आदि अनेक जटिल विधाओं पर साधिकार कलम चलानेवाले परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज के अपूर्व काव्यात्मक अवदान से प्रेरित हो, 14 नवम्बर 2016 को अखिल भारतीय आध्यात्मिक कवि सम्मेलन में, देश के ख्यातिलब्ध मूर्धन्य कवियों ने सुरेश 'पराग' के नेतृत्व में एवं पं. संकेत जी के मार्गदर्शन में सकल जैन समाज देवेन्द्रनगर की गरिमामयी अनुमोदना के संग पूज्यश्री को "**आदर्श महाकवि**" का अलंकरण भेंट कर निज सौभाग्य वर्धन किया।

चारित्र रथी—आत्मप्रदेशों में सच्चे भावलिंग की प्रतिष्ठा कर, आत्मरति और परविरति के साथ चारित्र रथ पर सवार हो पूज्य गुरुदेव आत्मोत्थान के सुपथ पर अबाध रीति से वर्धमान हैं। आपकी इस आत्मोन्नयन की निष्पंक चारित्र साधना से प्रभावित हो देश के वरिष्ठ साहित्यकार श्री सुरेश 'सरल' जी ने बिजयनगर चातुर्मास 2012 में आपको "**चारित्र रथी**" का अलंकरण भेंट कर स्व गौरववर्धन किया।

जिनागम पंथ प्रवर्तक—वर्तमान में पंथवाद, संतवाद और जातिवाद के नाम पर बिखरती दिगम्बर जैन समाज में अनादि अनिधन "**जिनागम पंथ**" का उद्घोष कर पूज्य गुरुदेव ने जैन एकता के लिये एक महनीय कार्य किया है। पूज्य गुरुदेव के इस "**जैन यूनिटी मिशन**" से प्रभावित हो सन् 2020 में श्री कल्पद्रुम महामण्डल विधान एवं गजरथ महोत्सव के सुप्रसंग पर बा.ब्र. ऋषभ भैया (नागपुर) के मार्गदर्शन में सकल दिगम्बर जैन समाज, बाराबंकी ने आपको "**जिनागम पंथ प्रवर्तक**" का अलंकरण भेंट कर आपके इस अभिनंद्य प्रयास की अभ्यर्थना की।

राष्ट्रगौरव—परम पूज्य भावलिंगी संत राष्ट्रयोगी श्रमणाचार्य श्री 108 विमर्शसागर जी महामुनिराज का अनुत्तम वैदुष्य जहाँ एक ओर धर्मनीति की प्रतिष्ठा करता है वहीं दूसरी ओर आपका क्रान्तिनिष्ठ मौलिक चिंतन, राजनीति, न्याय-नीति, मानव सेवा, शाकाहार, गौरक्षा, लोकतंत्र, पारिवारिक एवं सामाजिक दायित्वों के प्रति जन जागरण कर संपूर्ण देश के लिये गौरव का विषय बन पड़ा है। पूज्य गुरूदेव के दिव्यावदानों से आज समुचा देश गौरवान्वित है। इसीलिये महमूदाबाद चातुर्मास 2021 में सम्पूर्ण अवध प्रान्त की जैन समाज की गरिमामयी उपस्थिति में कला और साहित्य की अखिल भारतीय संस्था एवं "**राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ**" के अनुसांगिक संगठन "**संस्कार भारती**" की ओर से माननीय श्री गिरीशचन्द्र मिश्र, राज्यमंत्री, उत्तरप्रदेश शासन द्वारा पूज्य गुरुदेव को "**राष्ट्रगौरव**" का अलंकरण भेंट किया गया।

साहित्यिक यात्रा

भावलिंग संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज सौम्यवदन, गौरवर्ण, शुभ संस्थान, चौड़ा ललाट, दमकता मुखमण्डल, प्रशस्त मुद्रा, मधुर मुस्कान के धारी हैं, ऐसे ही आचार्यश्री की लेखनी भी जनमानस के हृदय को छूने वाली है। आचार्यश्री ने अनेक विषयों पर कलम चलाते हुए साहित्य सृजन किया है।

काव्य पाठ संग्रह –

1. हे वन्दनीय गुरुवर (काव्य)
2. मानतुंग के मोती
3. विमर्शाञ्जलि (पूजा पाठ संग्रह)
4. गीताञ्जलि (भजन)
5. विरागाञ्जलि (श्रमण पाठ संग्रह)
6. जीवन है पानी की बूँद (भाग-1)
7. जीवन है पानी की बूँद (भाग-2)
8. जीवन है पानी की बूँद (समग्र)
9. जीवन चलती हुई घड़ी (काव्य)
10. खूबसूरत लाइनें (काव्य)
11. समर्पण के स्वर (काव्य)
12. आईना (काव्य)
13. सोचता हूँ कभी-कभी (काव्य)
14. मेरा प्रेम स्वीकार करो (काव्य)
15. वाह क्या खूब कही (काव्य)
16. कर लो गुरु गुणगान (काव्य)
17. आओ सीखें जिनस्तोत्र
18. चटपटे प्रश्न-स्वादिष्ट उत्तर (पहेली)
19. उपासक संस्कार

प्रवचन साहित्य :

1. रयणोदय (प्रथम भाग)
2. रयणोदय (द्वितीय भाग)
3. रयणोदय (तृतीय भाग)
4. रयणोदय (चतुर्थ भाग)

5. रयणोदय (पंचम भाग)
6. योगोदय (प्रथम भाग)
7. योगोदय (द्वितीय भाग)
8. उपासकोदय (प्रथम भाग)
9. उपासकोदय (द्वितीय भाग)
10. देशव्रतोदय
11. साम्योदय (प्रथम भाग)
12. साम्योदय (द्वितीय भाग)
13. रत्नोदय (प्रथम भाग)
14. ज्ञानोदय
15. इष्टोदय (प्रथम भाग)
16. इष्टोदय (द्वितीय भाग)
17. गूँगी चीख
18. भरत जी घर में वैरागी
19. शब्द शब्द अमृत
20. शंका की एक रात

प्रेरक साहित्य :

1. जनवरी विमर्श
2. जैन श्रावक और दीपावली पर्व
3. विमर्श हस्ताक्षर
4. युग प्रतिक्रमण-एक अनुचिंतन

ग़ज़ल संग्रह :

ज़ाहिद की ग़ज़लें

विधान :

1. आचार्य विरागसागर विधान
2. एकीभाव विधान
3. श्री भक्तामर विधान (3)
4. विषापहार विधान
5. श्री कल्याण मंदिर विधान
6. श्री श्रमण उपसर्ग निवारण विधान

चालीसा : गणधर चालीसा

टीका :

योगसार प्राभृत ग्रंथ पर :

1. अप्पोदया (प्राकृत टीका)
2. आत्मोदया (हिन्दी टीका)

महाकाव्य :

''जीवन है पानी की बूँद'' (महाकाव्य)– पूज्य गुरुदेव इस अमर महाकाव्य के मूल रचयिता है। पूज्यश्री के इस बहुचर्चित महाकाव्य पर अनेकों साधु-भगवंत, विद्वान् एवं संगीतकार बहुसंख्या में नवीन छंदों का सृजन कर अपनी काव्य प्रतिभा को धन्य कर रहे हैं, जो इस महाकाव्य की लोकप्रियता का अनुपम उदाहरण है।

लिपि : विमर्श लिपि, विमर्श अंक लिपि

भाषा : विमर्श एम्बिसा

पद्यानुवाद :

1. सुप्रभात स्तोत्र
2. महावीराष्टक स्तोत्र
3. लघु स्वयंभू स्तोत्र
4. भक्तामर स्तोत्र (त्रय पद्यानुवाद)
5. गोम्मटेस स्तुति
6. द्वात्रिंशतिका (सामायिक पाठ)
7. विषापहार स्तोत्र
8. एकीभाव स्तोत्र
9. पञ्चमहागुरुभक्ति
10. तीर्थंकर जिनस्तुति
11. गणधरवलय स्तोत्र
12. कल्याणमंदिर स्तोत्र
13. परमानंद स्तोत्र
14. रयणसार
15. योगसार
16. उपासक संस्कार
17. देशव्रतोद्योतन
18. ज्ञानांकुश

बहुचर्चित भजन :

1. जीवन है पानी की बूँद (महाकाव्य)
2. कर तू प्रभु का ध्यान
3. ऋण मुक्ति का वर दीजिये
4. शान्तिनाथ कीर्तन
5. देश और धर्म के लिये जिओ
6. माँ

प्रेरणा से प्रकाशन :

1. सिर्फ दो प्रवचन (आचार्य विरागसागरजी, सम्पादक-आचार्य विमर्शसागर जी)
2. हिन्दी साहित्य की सन्त परम्परा में आचार्य विरागसागर के कृतित्त्व का अनुशीलन (डॉ. लोकेश खरे)
3. समसामयिक – आचार विद्वत् संगोष्ठी (कोटा)
4. पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय – राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी (शिवपुरी)
5. प्रज्ञाशील महामनीषी

प्रेरणा से स्थापित :

- **आचार्य विरागसागर ग्रंथमाला**
- **जिनागम पंथ ग्रंथमाला**

उद्देश्य : मूल जिनागम का संरक्षण, प्रकाशन
प्रचार-प्रसार एवं लोकोपयोगी धार्मिक, नैतिक साहित्य का निर्माण, प्रकाशन

विद्वत् संगोष्ठी :

1. समसामयिक – आचार विद्वत् संगोष्ठी (कोटा-2006)
2. पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय अनुशीलन राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी (शिवपुरी-2007)
3. जैन दर्शन में कर्म सिद्धान्त राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी (बड़ौत-2014)
4. जीवन है पानी की बूँद (महाकाव्य) राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी (बड़ा मलहरा-2016)
5. जीवन है पानी की बूँद (महाकाव्य) राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी (देवेन्द्रनगर-2016)
6. समसामयिक राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी एवं जैन पत्रकार, संपादक सम्मेलन (जबलपुर-2017)
7. आचार्यश्री विमर्शसागरजी कृत 'रयणोदय' पर राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी एवं जैन पत्रकार, संपादक सम्मेलन (छिंदवाड़ा -2018)।
8. आचार्यश्री विमर्शसागरजी कृत 'ज़ाहिद की ग़ज़लें' कृति पर साहित्यकार सम्मेलन (छिंदवाड़ा-2018)
9. आचार्यश्री विमर्शसागर जी कृत 'रयणोदय' पर राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी (दुर्ग-2019)।

आनन्द महोत्सव (पूजन प्रशिक्षण शिविर) – आचार्यश्री के सानिध्य एवं निर्देशन में आयोजित 'आनन्द महोत्सव' एक ऐसी प्रयोगशाला है जिसमें जैनधर्म के संस्कार एवं शिक्षा का प्रयोग करना सिखाया जाता है। यदि चेतनतीर्थ स्वरूप उपासक संस्कारित नहीं, तो अचेतनतीर्थ स्वरूप जिनमंदिरों का महत्व नहीं जाना जा सकता। आचार्यश्री जब अपने मधुर कंठ से शिविर का यथायोग्य संचालन करते हैं तब हर श्रावक भक्ति में ऐसा लीन हो जाता है कि 4-5 घंटे का भी पता नहीं चलता। आचार्यश्री के निर्देशन में आयोजित इस शिविर के माध्यम से आज हजारों लोग जैनत्व के संस्कारों से जुड़े हैं। अभी तक 24 पूजन शिविर आयोजित हो चुके हैं–

1. महरौनी (उ.प्र.)
2. वरायठा (म.प्र.)
3. अंकुर कॉलोनी, सागर (म.प्र.)
4. सतना (म.प्र.)

5. अशोकनगर (म.प्र.)
6. रामगंजमण्डी (राज.)
7. भानपुरा (म.प्र.)
8. सिंगोली (म.प्र.)
9. कोटा (राज.)
10. शिवपुरी (म.प्र.)
11. आगरा (उ.प्र.)
12. एटा (उ.प्र.)
13. डूंगरपुर (राज.)
14. अशोकनगर (म.प्र.)
15. बिजयनगर (राज.)
16. भिण्ड (म.प्र.)
17. बड़ौत (उ.प्र.)
18. टीकमगढ़ (म.प्र.)
19. देवेन्द्रनगर (म.प्र.)
20. जबलपुर (म.प्र.)
21. लखनादौन (म.प्र.)
22. छिंदवाड़ा (म.प्र.)
23. दुर्ग (छत्तीसगढ़)
24. फतेहपुर (उ.प्र.)

पंचकल्याणक गजरथ महोत्सव :

1. नेमिनाथ पंचकल्याणक एवं गजरथ महोत्सव-2002 (रजवांस, सागर, म.प्र.)
2. आदिनाथ पंचकल्याणक एवं गजरथ महोत्सव-2003 (महरौनी, ललितपुर, उ.प्र.)
3. आदिनाथ पंचकल्याणक, रथ महोत्सव-2004 (बूँदी, राज.)
4. आदिनाथ पंचकल्याणक, गजरथ महोत्सव-2007 (रामगंजमण्डी, कोटा ,राज.)
5. पार्श्वनाथ पंचकल्याणक, रथोत्सव-2007 (कोटा, राज.)
6. आदिनाथ पंचकल्याणक, गजरथ महोत्सव-2008 (शिवपुरी, म.प्र.)
7. आदिनाथ पंचकल्याणक, गजरथ महोत्सव-2009 (आगरा, उ.प्र.)
8. आदिनाथ पंचकल्याणक, गजरथ महोत्सव-2010 (एटा, उ.प्र.)
9. आदिनाथ पंचकल्याणक, त्रय गजरथ महोत्सव-2012 (जतारा, म.प्र.)
10. आदिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव-2013 (तीर्थधाम आदीश्वरम् चंदेरी, म.प्र.)
11. आदिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, त्रय गजरथ महोत्सव-2015 (पृथ्वीपुर, म.प्र.)
12. आदिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, गजरथ महोत्सव-2015 (टीकमगढ़, म.प्र.)
13. आदिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, त्रय गजरथ महोत्सव-2015 (बैरवार, जतारा, म.प्र.)
14. आदिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, गजरथ महोत्सव-2018 (धनौरा, म.प्र.)
18. आदिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, रथ महोत्सव-2021 (महमूदाबाद उ.प्र.)

चातुर्मास :

1. मढ़ियाजी जबलपुर (म.प्र.) — 1996
2. भिण्ड (म.प्र.) — 1997
3. भिण्ड (म.प्र.) — 1998
4. भिण्ड (म.प्र.) — 1999
5. महरौनी (उ.प्र.) — 2000
6. अंकुर कॉलोनी (सागर, म.प्र.) — 2001
7. सतना (म.प्र.) — 2002
8. अशोकनगर (म.प्र.) — 2003
9. रामगंजमण्डी (राज.) — 2004
10. सिंगोली (म.प्र.) — 2005
11. कोटा (राज.) — 2006

12. शिवपुरी (म.प्र.)	—	2007
13. आगरा (उ.प्र.)	—	2008
14. एटा (उ.प्र.)	—	2009
15. डूंगरपुर (राज.)	—	2010
16. अशोकनगर (म.प्र.)	—	2011
17. बिजयनगर (राज.)	—	2012
18. भिण्ड (म.प्र.)	—	2013
19. बड़ौत (उ.प्र.)	—	2014
20. टीकमगढ़ (म.प्र.)	—	2015
21. देवेन्द्रनगर (म.प्र.)	—	2016
22. जबलपुर (म.प्र.)	—	2017
23. छिंदवाड़ा (म.प्र.)	—	2018
24. दुर्ग (छत्तीसगढ़)	—	2019
25. बाराबंकी (उ.प्र.)	—	2020
26. महमूदाबाद (उ.प्र.)	—	2021
27. गाजियाबाद (उ.प्र.)	—	2022
28. जतारा (म.प्र.)	—	2023

वर्तमान संत संस्था में आचार्यश्री विमर्शसागर जी महाराज एक ऐसे श्रेष्ठ संत हैं जिनके पास ज्ञान संस्कार की चर्या एवं चर्चा देखने-सुनने को मिलती है। कम बोलना लेकिन काम का बोलना आचार्यश्री की अपनी विशिष्ट शैली है। प्रवचनों में सकारात्मक चिंतन को परोसने वाले हित-मित प्रियभाषी, ''जिनागम पंथ प्रवर्तक'' आचार्यश्री पंथवाद-संतवाद-जातिवाद की भी खूब खबर लेते हैं। सच्चे संतत्व को प्रकाशित करनेवाले आचार्यश्री कहते हैं, पंथ-संत-जातिवाद को बढ़ावा देनेवाले श्रमण एवं श्रावक जिनधर्म के विनाशक होंगे। आचार्यों की अपनी-अपनी आचार परम्परा से श्रावक साधुओं के प्रति अश्रद्धानी होंगे, साथ ही सामाजिक समरसता, एकता नष्ट होगी। सचमुच आचार्यश्री का चिन्तन भविष्य की व्याख्या कर रहा है। आचार्यश्री का सरल-सौम्य व्यक्तित्त्व एवं पूर्वापर चिंतन ही आचार्यश्री की अलग पहचान है। ऐसे युगचेता संत के चरणों में हम बारम्बार नमन करते हैं।

-श्रमण विचिन्त्यसागर (संघस्थ)

पूज्य गुरुदेव से संबंधित अन्य साहित्य

जीवनी साहित्य :

1. राष्ट्रयोगी : लेखक – श्री सुरेश 'सरल' जबलपुर (म.प्र.)
2. आँगन की तुलसी : लेखक – प्राचार्य श्री निहाल चन्द जैन, बीना (म.प्र.)
3. जतारा का ध्रुवतारा : लेखक – श्री कपूर चंद जैन 'बंसल', जतारा (म.प्र.)
4. भावलिंगी संत (महाकाव्य) : लेखक – श्रमण विचिन्त्यसागर मुनि (संघस्थ)
5. विमर्श धाम (महाकाव्य) : लेखक – पं. संकेत जैन 'विवेक', देवेन्द्रनगर (म.प्र)
6. सर्वोदयी संत (महाकाव्य) : लेखक – श्री ज्ञानचन्द जैन 'दाऊ', सागर (म.प्र.)
7. विमर्श महाभाष्य : लेखक – पं. संकेत जैन 'विवेक', देवेन्द्रनगर (म.प्र.)
8. विमर्श वाटिका : लेखक – श्री कपूर चंद जैन 'बंसल', जतारा (म.प्र.)
9. विमर्श भक्ति शतक : लेखिका – श्रीमती स्मृति जैन 'भारत', अशोकनगर (म.प्र.)
10. विमर्श शतक 1, 2 : लेखक – पं. ब्रजेन्द्र जैन, देवेन्द्र नगर (म.प्र.)
11. विमर्श वंदना : लेखक – कवि शशिकर 'खटका', राजस्थानी, बिजयनगर (राज.)
12. विमस्स महाकव्वं : लेखक-डॉ. उदयचन्द्र जैन उदयपुर (राज.)

विधान :

1. आचार्य विमर्शसागर विधान : लेखक – श्रमण विचिन्त्यसागर मुनि (संघस्थ)
2. भावलिंगी संत विधान- श्रमण विचिन्त्यसागर मुनि
3. संकट मोचन तारणहारे-गुरु विमर्श विधान : लेखक – पं. संकेत जैन 'विवेक' देवेन्द्रनगर (म.प्र.)

स्मारिकायें :

1. विमर्श वारिधि (बिजयनगर चातुर्मास 2012, स्मारिका)
2. विमर्श प्रवाह (बड़ौत चातुर्मास 2014, स्मारिका)
3. विमर्श गीतिका (टीकमगढ़ चातुर्मास 2015, स्मारिका)
4. विमर्शानुभूति (देवेन्द्रनगर चातुर्मास 2016, स्मारिका)
5. विमर्श वात्सल्य (जबलपुर चातुर्मास 2017, स्मारिका)
6. विमर्श प्रभा (छिंदवाड़ा चातुर्मास 2018, स्मारिका)

मासिक पत्रिका :

विमर्श प्रवाह (मासिक)
प्रधान संपादक – डॉ. श्रेयांसकुमार जैन (बड़ौत)
संपादिका – डॉ. अल्पना जैन (ग्वालियर)
प्रबंध संपादक – डॉ. विश्वजीत जैन (आगरा)
संपादक – पं. सर्वेश शास्त्री, पं. संकेत जैन 'विवेक'

बहुचर्चित 'जीवन है पानी की बूँद' (महाकाव्य) का उद्भव मूल रचयिता की कलम से...

बात 1997 भिण्ड चातुर्मास की है–

सूरज गुनगुनी धूप लेकर क्षितिज पर चमकने लगा। परम पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज अपने विशाल संघ के साथ प्रभातकालीन आवश्यक भक्ति क्रिया से निवृत्त हो चुके थे। प्रतिदिन की भाँति परम पूज्य गुरुदेव अपने विशाल संघ के साथ नित्य क्रिया हेतु नसियाँ जी की ओर बढ़ते जा रहे थे।

पूज्य गुरुदेव के साथ मैं भी यथाक्रम ईर्यासमिति से चल रहा था, और काव्य में रुचि होने के कारण चिंतन को आध्यात्मिक अनुभूतियों से स्नान करा रहा था। तभी अचानक चिंतन की गर्भस्थली में एक पंक्ति 'जीवन है पानी की बूँद, कब मिट जाये रे' का प्रसव हुआ, और मैं इस प्रसव की परमानंद अनुभूति का बारम्बार अनुभव करता हुआ स्मृति के दिव्य द्वार तक पहुँच गया। मैंने कभी 'होनी–अनहोनी' सीरियल देखा था, अत: होनी–अनहोनी शब्द को अपने काव्य में स्थान देने का विचार करता था, तभी अचानक नित्य क्रिया से लौटते समय चिंतन की गर्भस्थली से जुड़वाँ पंक्ति 'होनी–अनहोनी, हो–हो–2 कब क्या घट जाये रे' का प्रसव हुआ। मैं दोनों जुड़वाँ पंक्तियों का अनुभव करता हुआ, अंतरंग में गुरु आशीष की श्रद्धा से भर गया। अत: इस आध्यात्मिक भजन को पूर्ण करने में उपयोग लगाया। भजन की पूर्णता होते ही मैं पूज्य गुरुदेव के श्री चरणों में पहुँचा, और विनयपूर्वक अपना चिंतन मधुर स्वर में गुरु चरणों में समर्पित किया। सच कहूँ, गुरुदेव ने अत्यंत आह्लाद से भरकर मुझे शुभाशीष दिया। गुरु का वह मंगल आशीष ही है कि इस आध्यात्मिक भजन ने सभी के कंठ को स्पर्शित किया, और इस समय का बहुचर्चित भजन कहलाया। जैन हों या अजैन सभी ने इसे समभाव से स्वीकारा, और मुझे अत्यंत श्रद्धा और प्यार से 'जीवन है पानी की बूँद' चिंतन के प्रणेता, इस नाम से पुकारने लगे।

यद्यपि इस भजन को जब अन्य साधु, विद्वान्, गीतकार, गायक, अपनी प्रशंसा के लिए अपनी रचना कहकर बोलने लगे, तब पूज्य गुरुदेव को यह कहना पड़ा, कि 'जीवन है पानी की बूँद' भजन तो विमर्शसागर जी की मूल गाथाएँ है जिस पर अन्य साधु, विद्वान्, गायक तो मात्र टीकायें लिख रहे हैं।

–श्रमणाचार्य विमर्शसागर

जीवन है पानी की बूँद (महाकाव्य)

रचयिता–श्रमणाचार्य विमर्शसागर

जीवन है पानी की बूँद, कब मिट जाये रे–ऽऽ
होनी–अनहोनी, हो–हो–2, कब क्या घट जाये रे ऽऽ

साथ निभायेगा बेटा, सोच रहा लेटा–लेटा।
हाय बुढ़ापा आयेगा, पास न आयेगा बेटा।
ख्वाबों में तू क्यों, हो–हो–2 आनन्द मनाये रे ऽऽ

अर्द्धमृतक समवृद्धापन, झुकी कमर सिकुड़न–सिकुड़न।
गोदी में पोता–पोती, खोज रहा बचपन यौवन।
बीते जीवन के, हो–हो–2 तू गीत सुनाये रे ऽऽ

हाथों में लकड़ी थामी, चाल हो गई मस्तानी।
यम के घर खुद जाने की, जैसे मन में हो ठानी।
बेटा बहु सोचें, हो हो–2 डोकरो कब मर जाये रे ऽऽ

चारपाई पर लेटा है, पास न बेटी–बेटा है।
चिल्लाता है पानी दो, कोई न पानी देता है।
भूखा प्यासा ही, हो–हो–2 इक दिन मर जाये रे ऽऽ

जीवन बीता अरहट में, पुण्य–पाप की करवट में।
चढ़कर अर्थी पर जाये, अन्त समय भी मरघट में।
तेरा ही बेटा, हो–हो–2 तेरा कफन सजाये रे ऽऽ

सिर पर जिसे बिठाया है, गोदी में भी खिलाया है।
लाड़ प्यार से पाला है, सुख की नींद सुलाया है।
तेरा ही बेटा, हो–हो–2 तुझे आग लगाये रे ऽऽ

जिसके लिए कमाता है, जीवन साथी बताता है।
जिसकी चिन्ता कर करके, अपना चैन गँवाता है।
देहरी से बाहर, हो–हो–2 वो साथ न जाये रे ऽऽ

कर तू प्रभु का ध्यान

रचयिता : श्रमणाचार्य विमर्शसागर

कर तू प्रभु का ध्यान–बाबा, कर तू प्रभु का ध्यान।
निज घट में भगवान–बाबा, निज घट में भगवान।।

काँटों में भी जीवन तेरा, फूलों सा खिल जायेगा।
खोज रहा है जिसको तू वह, पलभर में मिल जायेगा।
खुद को तू पहिचान–बाबा, खुद को तू पहिचान।1।।

धन–वैभव यह महल–खजाना, कुछ भी साथ न जायेगा।
सुबह खिला जो फूल बाग में, साँझ समय मुरझायेगा।
कर ले धर्मध्यान–बाबा, कर ले धर्मध्यान।।2।।

कभी किसी का दिल दुःख जाये, ऐसे बोल कभी मत बोल।
घावों पर मल्हम बन जायें, ऐसे बोल बड़े अनमोल।
कहलाता यह ज्ञान–बाबा, कहलाता यह ज्ञान।।3।।

माता–पिता, बड़ों का आदर, धर्ममार्ग पर चलो सदा।
गुरुजन की नित सेवा करना, श्रावक का कर्तव्य कहा।
पाओगे सम्मान–बाबा, पाओगे सम्मान।।4।।

हिंसा, झूठ, कुशील, परिग्रह, चोरी यह मत पाप करो।
पाप विनाशक, धर्म प्रकाशक, णमोकार का जाप करो।
हो सम्यक् श्रद्धान–बाबा, हो सम्यक् श्रद्धान।।5।।

राग–द्वेष भावों के कारण, भवसागर में डूब रहा।
गँवा रहा भोगों में जीवन, मन फिर भी न ऊब रहा।
क्यों बनता नादान–बाबा, क्यों बनता नादान।।6।।

जिसको अपना कहा आज तक, हुआ कभी ना वह अपना।
जिसकी खातिर जिया आज तक, निकला वह सुंदर सपना।।
क्यों तू करे गुमान–बाबा, क्यों तू करे गुमान।।7।।

मेंढक ने प्रभु ध्यान किया जब, मरकर देव हुआ तत्काल।
समवसरण में प्रभु को ध्याया, जीवन उसका हुआ निहाल।
मिट जाये अज्ञान–बाबा, मिट जाये अज्ञान।।8।।

शान्तिनाथ कीर्तन

रचयिता : श्रमणाचार्य विमर्शसागर

जय हो, जय हो, जय हो, जय हो, जय हो, भगवन्–2
जय हो, जय हो, जय हो, जय हो, शान्ति भगवन्।

हम आये हैं – द्वार तुम्हारे–2
दे दो प्रभु जी, हमको सहारे–2
शान्तिनाथ भगवन्–भगवन्–भगवन्ऽऽ
जय हो.....

छवि वीतरागी–प्यारी प्यारी लागे–2
दरश जो पाया–धन्य भाग जागे–2
चरणों करुँ नमन–नमन–नमनऽऽ
जय हो.....

सर्वज्ञ स्वामी–शरण में आया–2,
कहीं न मिला जो–वह सुख पाया
हर्षित हुए नयन–नयन–नयनऽऽ
जय हो.....

हित उपदेशी–आप कहाते–2
हम गुण गाने–भक्त बन जाते–2
छोड़ूँ न अब चरण–चरण–चरणऽऽ
जय हो.....

अहार जी के – बाबा कहाते–2
यक्ष यक्षिणी भी–सिर को नवाते–2
झुकते हैं मुनिगण–मुनिगण–मुनिगणऽऽ
जय हो.....

दुखिया हो कोई–द्वार पे आये–2
हँसता हुआ ही–द्वार से जाये–2
श्रद्धा हो पावन–पावन–पावनऽऽ
जय हो.....

ऋण मुक्ति का वर दीजिये

रचयिता : श्रमणाचार्य विमर्शसागर

गुरुदेव मेरे आप बस, इतनी कृपा कर दीजिए।
कल्याण अपना कर सकूँ, वरदान इतना दीजिए।।

सोचूँ सदा अपना सुहित, नहिं काम क्रोध विकार हो।
हे नाथ ! गुरु आदेश का, पालन सदा स्वीकार हो।
सिर पर मेरे आशीष का, शुभ हाथ प्रभु धर दीजिए। गुरुदेव...

दृढ़ शील संयम व्रत धरूँ, नित ब्रह्मचर्य लखूँ सदा।
सीता सुदर्शन सम बनूँ, निज आत्मसौख्य चखूँ सदा।
माता सुता बहिना पिता, दृष्टि विमल कर दीजिए। गुरुदेव...

सच्चा समर्पण भाव हो, नहिं स्वार्थ की दुर्गन्ध हो।
विश्वासघात ना हम करें, हर श्वाँस में सौगंध हो।
हे नाथ! गुरु विश्वास की, डोरी अमर कर दीजिए। गुरुदेव...

जागे न मन में वासना, मन में कषायें न जगें।
हो वात्सल्य हृदय सदा, कर्त्तव्य से न कभी डिगें।
गुरुभक्ति की सरिता बहे, निर्मल हृदय कर दीजिए। गुरुदेव...

भावों में निश्छलता रहे, छल की रहे न भावना।
गुरु पादमूल शरण मिले, करते हैं हम नित कामना।
जिनधर्म जिनआज्ञा सुगुरु, सेवा का अवसर दीजिए। गुरुदेव...

उपकार जो मुझ पर किये, गुरुवर भुला न पायेंगे।
जब तक है तन में श्वाँस हम, उपकार गुरु के गायेंगे।
हम शिष्य हैं गुरु के ऋणी, ऋणमुक्ति का वर दीजिए। गुरुदेव...

सम्यक्त्व ज्ञान चरित्र से, सुरभित रहे मम साधना।
आचार की मर्यादा ही, हे नाथ ! हो आराधना।
स्वर-स्वर समाधिभाव का, चिंतन मुखर कर दीजिए। गुरुदेव...

भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज ऐसे प्रथम दिगम्बराचार्य हैं, जिनकी यह रचना म.प्र. शिक्षा बोर्ड ने कक्षा ग्यारहवीं की पुस्तक 'मकरन्द' में शामिल की है।

देश और धर्म के लिये जिओ

देश और धर्म के लिए जिओ–2
हर कदम–कदम पे सबको ले
एकता अखण्डता की बात ले
शुभ–पवित्र लक्ष्य के लिए जिओ
देश.....

मातृभूमि पर भी हमको गर्व हो
मातृभूमि रक्षा एक पर्व हो
ऐसे राष्ट्र पर्व के लिए जिओ
देश.....

श्रम सभी का एक मूलमंत्र हो
श्रम के लिए हर मनुज स्वतंत्र हो
लोकलाज शर्म छोड़कर जिओ
देश.....

हो अनाथ दुखिया अगर राह में
हो सहानुभूति हर निगाह में
करुणा और प्रेम के लिए जिओ
देश.....

भाईचारा सबके दिल में हो सदा
कटुता घृणा बैरभाव हो विदा
जीना, श्रेष्ठ कर्म के लिए जिओ
देश.....

''माँ''–एक सुखद अनुभूति का एहसास

रचयिता : श्रमणाचार्य विमर्शसागर

बेटा हो दु:ख–पीड़ा में, माँ बन जाती दीवार।
माँ के प्यार सा इस दुनियाँ में नहीं किसी का प्यार।।
ओ–ऽऽ माँ, प्यारी माँ–2

माँ की गोदी में बेटा जब चैन से सोता है।
बेटा जैसा और किसी का पुण्य न होता है।
किलकारी भर-भरकर माँ का करता है दीदार।
माँ के प्यार सा.....

बेटा जब–जब रोता है, माँ लोरी गाती है।
भूखी–प्यासी रहकर भी माँ, दूध पिलाती है।
चंदा–सूरज, अश्रु बहाते, पाने माँ का प्यार।
माँ के प्यार सा.....

कोठी–बँगला रुपया–पैसा, सब ऐशो–आराम।
माँ बिन सूना घर का आँगन, माँ को करो प्रणाम।
माँ ही घर की तुलसी है, रौनक, घर का शृंगार।
माँ के प्यार सा.....

जीवन–संगिनी पाकर माँ का प्यार भुलायेगा।
घर में दीवाली होगी पर खुशी न पायेगा।
माँ ही घर की दीवाली, होली, घर का त्यौहार।
माँ के प्यार सा.....

अपनी खुशियाँ कर न्यौछावर, देती है खुशियाँ।
बेटा समझे, न समझे, समझे न यह दुनियाँ।
माँ चलती काँटों पर, देती फूलों का उपहार।
माँ के प्यार सा.....

दुनिया छूट भी जाये, माँ का कभी न छूटे साथ।
माँ ने पकड़ा हाथ हमारा, पकड़ो माँ का हाथ।
सब तीरथ माँ चरणों में, बन जाओ श्रवण कुमार।
माँ के प्यार सा.....

राम, कृष्ण, महावीर ने माँ का मान बढ़ाया है।
जाँ देकर आजाद भगत ने, माँ को पाया है।
सदा चिरायु, सुखी रहो, भारत माँ करे पुकार।
माँ के प्यार सा.....

वर्तमान में जातिवाद-पंथवाद में बँटती हुई जैन समाज का ध्यान
आकर्षित करनेवाली और सम्यक् बोध प्रदान करनेवाली

भावलिंगी संत श्रमणाचार्य
श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज द्वारा रचित पंक्तियाँ

(1)

तेरा और बीस पंथ, उलझे हैं श्रावक संत,
कोई तेरा कोई बीस करते बढ़ाई हैं।
करते हैं राग-द्वेष, जानें नहीं धर्म लेश,
मंदिरों में खींचतान करते लड़ाई हैं।।
कर रहे धर्म लोप, मानते हैं धर्म गोप,
एक दूसरे की अहंकार की चढ़ाई है।
तेरा-बीस के बयान, जैसे हिन्द-पाकिस्तान
हाय जैन एकता भी आज लड़खड़ाई है।।

(2)

कोई है बघेरवाल, कोई खण्डेलवाल,
कोई अग्रवाल तो कोई परवार है।
कोई-कोई जैसवाल, कोई-कोई ओसवाल,
कोई पोरवाल कोई गोल शृंगार है।।
बंद हुये बोलचाल, वाल की खड़ी दीवाल,
जातियों का भूत सबके ही सिर सवार है।
मंदिरों में अब जैन कहीं दिखते ही नहीं,
मंदिरों पे अब जातियों का अधिकार है।।

(3)

जातिमद चढ़ रहा, पंथभेद बढ़ रहा,
जहाँ देखो वहाँ राग-द्वेष की ही बात है।
महावीर हुये खण्डेलवाल, अग्रवाल,
आदि-आदि मंदिरों पे लिखा ये दिखात है।।
कहीं महावीर हुये तेरा पंथी, बीस पंथी,
धर्मात्माओं ने भी दी क्या सौगात है।
सोचा जब मैं भी महावीर को पहचान दूँ,
तो धरा महावीर रूप, मेरी क्या औकात है।।

प.पू. भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज ऐसे प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य हैं, जिनके द्वारा सन् 2011 में नूतन लिपि का सृजन किया गया, जिसे 'विमर्श लिपि' की संज्ञा दी गई है।

विमर्श लिपि

त वर्ग	त	थ	द	ध	न
विमर्श लिपि					
प वर्ग	प	फ	ब	भ	म
विमर्श लिपि					
अंतस्थ	य	र	ल	व	
विमर्श लिपि					
ऊष्माण	श	ष	स	ह	
विमर्श लिपि					
संयुक्त	क्ष	त्र	ज्ञ		
विमर्श लिपि					

विमर्श लिपि में शब्द के नीचे लाईन होती है।
चिन्ह भी लाईन पर ऊपर नीचे आगे-पीछे लगते हैं।
जैसे

राम जाता है	क्या राम जाता है?
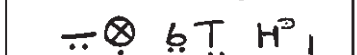	

शांति भक्ति का अतिशय देख रोमांचित हूँ

– श्रमणाचार्य विमर्शसागर

संसारी जीव एक व्यापारी की तरह है, जो नित्य शुभ और अशुभ कर्म का संचय करता है, उनका फल भोगता है। अशुभ कर्म का फल दु:ख है। शुभ कर्म का फल सुख। मोक्षमार्ग शुभाशुभ कर्म से मुक्त अतीन्द्रिय सुख का साधन है। मोक्षमार्गी साधक प्रधानतया अतीन्द्रिय सुख के मार्ग का आश्रय करते हैं। कदाचित् शुभमार्ग का आश्रय कर अशुभ कर्म की शान्ति का उपाय भी करते हैं, जिनधर्म की प्रभावना करते हैं। जैसे 48 कोठरी में बंद आचार्य मानतुंग स्वामी ने आदिनाथ स्तुति की और ताले स्वयमेव खुल गये। आचार्य वादिराज स्वामी ने जिनस्तुति की और कुष्ठ रोग तत्काल ठीक हो गया। आचार्य पूज्यपाद स्वामी ने शांति स्तुति की और नेत्र ज्योति आ गई। कवि धनंजय ने आदि स्तुति की और पुत्र का विष तत्काल शान्त हो गया, पुत्र मानो सोते से जाग गया, जिनधर्म की भी महाप्रभावना हुई।

सच 25.12.2015 का दिन मैं कभी भूल नहीं सकता जब दोपहर सामायिक हेतु चतुर्दिक् कायोत्सर्ग कर मैं बैठने ही वाला था कि 15 दिन से अत्यन्त अस्वस्थ आँचल दीदी को संघस्थ दीदीयाँ व्हील चेयर से आशीर्वाद हेतु लाईं। पैरालाइसिस जैसी शिकायत होने से पैर-हाथ से तो असमर्थता थी ही, आज आँखों से दिखना एवं कानों से सुनना भी बंद हो गया था। अत्यन्त दयनीय हालत में दीदी को देखकर हृदय करुणा से द्रवित हो उठा। मन ही मन भगवान शांतिनाथ का स्मरण कर प्रभु से बोला - 'हे नाथ! 22 वर्षीय असाध्य रोग से पीड़ित आँचल दीदी की अस्वस्थता आँखों से देखी नहीं जाती। प्रसिद्ध डॉक्टर्स भी स्पष्ट मना कर चुके हैं कि दीदी अब कभी स्वस्थ नहीं हो सकतीं। हमारे मेडिकल साइंस में यह प्रथम केस है कि दीदी की रिपोर्ट नॉर्मल है और अस्वस्थता बढ़ती जा रही है। हे प्रभो! अब तो एकमात्र आपकी भक्ति ही शरण है। सच्चा भक्त आपकी भक्ति के फल से जब पूर्ण निरामय अवस्था को प्राप्त कर सकता है, तो इस रोग से मुक्ति क्यों नहीं मिलेगी।' मैं अत्यन्त करुणा से भरा हुआ आँचल दीदी से बोला - बेटा! मैं तुम्हें शांतिभक्ति सुना रहा हूँ, मेरी आज की यही सामायिक है, मैं भगवान शांतिनाथ को हृदयकमल पर विराजमान करके आचार्य भगवन् पूज्यपाद स्वामी का भक्ति से स्मरण कर, पूज्य आचार्य गुरुदेव विरागसागर जी का आशीष अनुभव कर अत्यन्त तन्मयता के साथ शांतिभक्ति का उच्चारण करने लगा। अपूर्व विशुद्धि अनुभव हो रही थी, रोम-रोम भक्ति रस में सराबोर था। तभी अचानक आँचल दीदी की आँखों में नेत्र ज्योति आ गई, कानों से स्पष्ट सुनाई देने लगा, मुख का टेढ़ापन दूर हो गया और निश्चल हाथ की अंगुलियाँ स्वयमेव खुल गईं, हाथ भी सहज चलने लगा। कमरे में जितने लोग थे, सभी जय-जयकार करने लगे। शांतिभक्ति का अतिशय देख सभी रोमांचित हो गये। आँचल दीदी बोलीं - गुरुदेव! मेरा चेहरा पहले जैसा

हो गया है। मैं पहले की तरह ही बोल रही हूँ न। मुझे पहले की तरह ही दिखाई एवं सुनाई भी दे रहा है। मैंने कहा - बेटा! यह सब भगवान शांतिनाथ की कृपा है। आँचल दीदी बोलीं - गुरुदेव! अब तो मैं आहार का शोधन भी कर सकती हूँ, और हाथों से आहार दे भी सकती हूँ, तभी उनका ध्यान अपने संवेदना शून्य पैर पर गया, बोलीं गुरुदेव! यदि मेरा पैर भी ठीक हो जाता तो मैं आपको जल्दी आहार दे पाती। मैंने कहा - बेटा! भगवान शांतिनाथ की भक्ति से वह भी शीघ्र ठीक होगा। मैंने पुन: दीदी को शांतिभक्ति सुनाना शुरू किया, दीदी भी साथ पढ़ने लगीं। अहो! अद्भुत आनन्द रस बहने लगा प्रभु की भक्ति करते। तभी दीदी के पैर की अंगुलियाँ चलने लगीं और दीदी अपने पैरों पर खड़ी हो गईं। व्हील चेयर को पीछे धकेल दिया और कमरे में ही चलने लगीं। अभी शांतिभक्ति पूर्ण नहीं हुई थी, अत: मैंने कहा - बेटा! भक्ति कर लो। सभी ने भावपूर्वक शांतिभक्ति पूर्ण की। आँचल दीदी बोलीं - गुरुदेव! ऐसा लग रहा है मानो सोकर उठी हूँ। गुरुदेव! मैं तो बिल्कुल ठीक हो गई। मैंने कहा - बेटा! शांतिभक्ति के प्रसाद से तुम ठीक हुई हो। दीदी बोलीं - गुरुदेव सब आपकी ही कृपा है।

कमरे में दीदी के माता-पिता भी उपस्थित थे। यह भक्ति का चमत्कार देख उनकी आँखों से खुशी के आँसू ढुलक रहे थे। मैंने कहा - अब सभी लोग भगवान शांतिनाथ के पास चलेंगे। एक बार वहाँ भी शांतिभक्ति का पाठ करेंगे। दीदी ने कहा - अब मैं व्हील चेयर से नहीं, पैदल ही चलूँगी। अहो! दीदी को पैदल चलते देख उपस्थित सैकड़ों भक्त जन आश्चर्य करने लगे। हमने शांति जिनालय में पुन: शांतिभक्ति का पाठ किया और भगवान शांतिनाथ के चरणों का भावपूर्वक स्पर्श कर आँचल दीदी को एवं संघस्थ सभी साधुओं को आशीर्वाद दिया। फिर हम सभी प.पू. सूरिगच्छाचार्य गुरुदेव श्री विरागसागर जी के पास पहुँचे, वहाँ दीदी ने आचार्य वंदना की। पूज्य गुरुदेव ने मंगल आशीर्वाद दिया, और कहा - आहारजी में घटी यह अतिशयकारी घटना यहाँ चिरकाल तक गुंजायमान होती रहेगी।

सच, मैं बेहद रोमांचित और आनंदित हूँ। शांतिभक्ति का पाठ करते समय जो विशुद्धि और आनंद का अनुभव हुआ, वह शब्दों से व्यक्त नहीं किया जा सकता। भक्ति का यह अतिशय चमत्कार स्मृति पटल पर बार-बार आता ही रहता है। जिनेन्द्र भक्ति का माहात्म्य यही तो है-

विघ्नौघा प्रलयं यान्ति, शाकिनी भूत पन्नगा:।
विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे।।

अर्थात् जिनेश्वर की स्तुति करने पर विघ्नों का समूह तथा शाकिनी, भूत, सर्प आदि की बाधाएँ क्षण भर में क्षय को प्राप्त हो जाती हैं और विष भी निर्विषता को प्राप्त होता है।

जानें, क्या है जिनागम पंथ?

–श्रमणाचार्य विमर्शसागर

'जिनागम पंथ' अनादि–अनिधन, विश्व मैत्री, प्रेम, एकता का परम पावन संदेश है, जो तीर्थंकर भगवंत,केवली अरिहन्त, गणधर संत, आचार्य–उपाध्याय–निर्ग्रंथ के मुख से अतीतकाल में कहा गया, वर्तमान में कहा जा रहा है और भविष्यकाल में कहा जायेगा।

अहो! तीर्थंकर जिन की वाणी यानि जिनवाणी, जिनश्रुत, जिनागम और इसमें वर्णित आत्महितकारी पंथ, मार्ग। यही है जिनागम पंथ।

अहो! जिनागम में कथित पंथ अर्थात् मार्ग, यही सच्चा था सच्चा है और सच्चा रहेगा। तीर्थंकर सर्वज्ञ जिन की वाणी ही जिनागम है। और जिनागम में कथित श्रमण–श्रावक धर्म यह पंथ अर्थात् मार्ग है। जो श्रमण–श्रावक धर्म के मार्ग पर चल रहा है वह जिनागम पंथ का पथिक 'जिनागम पंथी' है।

सचमुच जिनागम पंथ शाश्वत था, शाश्वत है, शाश्वत रहेगा। जो जिनागम पंथ का पथिक है वह सम्यग्दृष्टि, श्रावक अथवा श्रमण संज्ञा को प्राप्त जिनागम पंथी है। जो जिनागम पंथ की श्रद्धा से रहित है वह मिथ्यादृष्टि है।

अहो! विदेह क्षेत्र में विराजित विद्यमान बीस तीर्थंकरों के मुख से गणधरादि परमेष्ठी भगवंतों के द्वारा आज भी जिनवाणी, जिनश्रुत, जिनागम प्रगट हो रहा है।

धन्य हैं, वे भव्य जीव जो जिनागम कथित समीचीन पंथ अर्थात् जिनागम पंथ को स्वीकार कर अनादि मोह, राग-द्वेष की परम्परा का विच्छेदन कर आत्मकल्याण कर रहे हैं। अहो! जिनागम पंथ के अलावा अन्य कोई कल्याण का मार्ग नहीं है। जिनागम पंथ के अलावा अन्य पंथ उन्मार्ग हैं, अकल्याणकारी हैं।

जयदु जिणागम पंथो, रागद्दोसप्प णासगो सेयो।
पंथो तेरह - बीसो, रागादि - वड्ढिओ असेयो।।

जो रागद्वेष का नाश करनेवाला है, कल्याणकारी है, ऐसा 'जिनागम पंथ जयवंत हो'। इसके अलावा तेरहपंथ, बीसपंथ आदि पंथ, रागद्वेष को बढ़ाने वाले हैं, अकल्याणकारी हैं।

अहो! कालदोष के कारण कतिपय विद्वानों ने तीर्थंकर जिनदेव के मुख से भाषित अर्थात् सर्वांग से खिरनेवाली दिव्यध्वनि में कथित जिनागम पंथ से बाह्य तेरहपंथ, बीसपंथ, शुद्ध तेरहपंथ आदि नाना पंथों की संज्ञाएँ रखकर परस्पर रागद्वेष को जन्म दिया है। कुछ विद्वान एवं श्रमण संज्ञा से भूषित जीवों ने भी ख्याति-पूजा-लाभ के लिए नये-नये पंथ गढ़कर भव्य जीवों का महान् अहित किया है।

अहो! अज्ञानता, आज ये जीव इन नाना संज्ञाओं से पंथों का पोषणकर जिनागम पंथ से दूर खड़े हो गये हैं। और कल्पित पंथों का पोषणकर अपना आत्म पतन ही कर रहे हैं। तेरह-बीस आदि संज्ञाएँ जिनेन्द्र देव की वाणी से बाह्य हैं। ये जिनागम पंथ से बाह्य पंथ ही वर्तमान में राग-द्वेष का कारण बने हुये हैं। चारों तरफ समाज में विघटन, मंदिरों में खींचतान, इन कल्पित तेरह-बीस आदि पंथों की ही देन है। जिनागम पंथ सभी को एक सूत्र में बाँधकर मैत्री-प्रेम-वात्सल्य का संदेश देता है।

अहो! आज भी यदि स्वकल्पित पंथों का दुराग्रह छोड़कर सब जीव जिनेन्द्र देव की वाणी यानि जिनवाणी, जिनागम में श्रद्धा रखें और जिनागम वर्णित पंथ यानि 'जिनागम पंथ' को सच्ची श्रद्धा से स्वीकारें, तो सर्व समाज में आज भी एकता का सूत्रपात हो सकता है। आपस के रागद्वेष मिट सकते हैं और जिनशासन गौरवान्वित हो सकता है।

'जयदु जिणागम पंथो।'
'जिनागम पंथ जयवंत हो।'

आइरिय-विमरससायरेण विरइदा

सरूव थुदी

उवओगमओ अप्पा अहं, जाणगसरूवो मम अहा।
णिद्दंदो अहमणिबंधो हं, आणंदकंद-सहज-महा।।
जाणिय सया दु संतमओ, णिय संतरस-पीउं सया।
णिय संतरस-लीणम्मि हं, णिय चेद-धुवरूवो अहा।।1।।

महसु असंखपदेसेसुं, भयवंत-अप्पा णिवसदि।
हं हुवमि परमप्पा सयं, परमप्प-रूवो विलसदि।।
हं सिद्धकुल-अंसो हुवमि, हु दंसावदि भविदव्वदा।
णिय सत्ति-अंसदो सिद्धो हं, दव्वस्स णिय णिय दव्वदा।।2।।

रागादि-भाव दु विगडीआ, दव्वम्मि णिय णवि दंसणं।
परदव्व-परभावाण दु, रूवम्मि चिद णवि फंसणं।।
पुहु सव्वदो विर सव्वदो, अवियाररूवो मम अहा,
हं पूर-सहजसहावदो, जो हु वीदरागमओ कहा।।3।।

गुण-दव्वदो हं धुवमहा, परिणमं णियदं पत्तो हं।
परिणदं अत्तमओ खलु, सत्तीए णियदओ अत्तो हं।।
कारण सयं हं कज्जमवि, सिवमग्गो मग्गफलं सयं।
हं भावलिंगी संतो जाणग- हुवमि सफल हु जीवणं।।4।।

आचार्य विमर्शसागर विरचित

स्वरूप स्तुति

हूँ आत्मा उपयोगमय, ज्ञायक स्वभाव मेरा अहा।
निर्द्वन्द हूँ निर्बन्ध हूँ, आनन्दकन्द सहज अहा।।
नित शान्तरसमय जानकर, निज शान्तरस नित पानकर।
निज शांतरस में लीन हूँ, ध्रुवरूप निज अनुभव अहा।।1।।

मेरे असंखप्रदेश में, भगवान् आतम बस रहा।
मैं हूँ स्वयं परमात्मा, परमात्मरूप विलस रहा।।
हूँ सिद्धकुल का अंश मैं, बतला रही भवितव्यता।
मैं सिद्ध शक्ति अंश से, निजद्रव्य की निज द्रव्यता।।2।।

रागादि भाव विकार का, निजद्रव्य में दर्शन नहीं।
परद्रव्य या परभाव का, चित् रूप स्पर्शन नहीं।।
सबसे पृथक् सबसे विलग, अविकार रूप मेरा अहा।
मैं पूर्ण सहज स्वभाव से, जो वीतरागमयी कहा।।3।।

हूँ द्रव्य–गुण से ध्रुव अहा, नित परिणमन को प्राप्त हूँ।
परिणमन निश्चय आप्तमय, शक्ति से निश्चय आप्त हूँ।।
कारण स्वयं हूँ कार्य भी, शिवमार्ग स्वयं हूँ मार्गफल।
मैं भावलिंगी संत हूँ, ज्ञायक हूँ मैं, जीवन सफल।।4।।

विमस्स-अट्ठगं

(डॉ. उदयचन्द्र जैन कृत)

बंधं पबंभ-अदि-णंद-विराग-मुत्तिं
तित्थेस-णायग-जिणं सयलं च तित्थं।
तच्चं अणंत-सुविस्स-विमस्स-णंदं
णम्मेमि रट्ठिग-सुजोगि-विमस्स-सूरिं।।1।।

अप्पं विसुद्ध-परिणाम-विमस्स-णीरं।
णीरेज्ज जीवण-जलं बहुमुल्ल-खीरं।
चक्खेदि सच्छ-परमप्प-रसं च णिच्चं।
णम्मेमि रट्ठिग-सुजोगि-विमस्स-सूरिं।।2।।

सारं च सार-समयं समयं च सारं
पत्तेज्ज सो णियमसार-पहुत्त-धीरं।
णिम्मल्ल-मल्ल-मदिमल्ल-सुदं च सुत्तं।
णम्मेमि रट्ठिग-सुजोगि-विमस्स-सूरिं।।3।।

रम्माहिरम्म-कवि-कम्म-पहाण-कव्वं।
गीएज्ज गीद-जण-खेत्त-सु-विज्ज-विज्जे।
मज्झप्पदेस-अणुसिक्खण-साल-साले
णम्मेमि रट्ठिग-सुजोगि-विमस्स-सूरिं।।4।।

आयार-पूद-सुविराग-विराग-सूरिं
णाणं च दंसण-चरित्त-तवं च णीरं।
णेदूणणिच्च रमदे हु विमस्स-छंदं।
णम्मेमि रट्ठिग-सुजोगि-विमस्स-सूरिं।।5।।

धुव्वो हु तारग-जतार-सुणंदणो सो।
सिप्पी इमो विविह-कब्ब कलंस-चंदो।
चारित्त-सम्मग-रही दु विमस्स-सीलो।
णम्मेमि रट्ठिग-सुजोगि-विमस्स-सूरिं।।6।।

संपुण्ण-सारद-बई सुद-आगमम्हि।
आरूढ़-हंस-समणाइरियो विमस्सो।
लिप्पि सिजेदि लिवि-बंह-विमस्स-णामं
णम्मेमि रट्ठिग-सुजोगि-विमस्स-सूरिं।।7।।

सामाण्ण-धम्म-अणुपालिद-भावलिंगी।
झाणे तवे समयसार समे णिमग्गो।
मग्गटपभावण-गुणी सुद-सेवि-साधुं।
णम्मेमि रट्ठिग-सुजोगि-विमस्स-सूरिं।।8।।

विमस्स-उदयो चंदो, विमस्से सम-संतए।
दंसेदि सावगाणं च, वाए वागेसरी-समे।।

श्री भक्तामर महामण्डल विधान
ॐ ह्रीं क्लीं
ॐ ह्रीं क्लीं
ॐ ह्रीं क्लीं
ॐ ह्रीं क्लीं
ॐ

मंगलाष्टक

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्र महिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः,
आचार्या[1] जिनशासनोन्नति–कराः पूज्या उपाध्यायकाः।
श्रीसिद्धान्त–सुपाठका मुनिवराः[2] रत्नत्रया–राधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु ते मंगलम्।।1।।

श्रीमन्नम्र – सुरा – सुरेन्द्र – मुकुट – प्रद्योत – रत्नप्रभा,
भास्वत्पाद–नखेन्दवः प्रवचनाम्– भोधीन्दवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिन–सिद्ध–सूर्यनुगताः ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्च गुरवः, कुर्वन्तु ते मंगलम्।।2।।

सम्यग्दर्शन – बोध – वृत्त – ममलं, रत्नत्रयं पावनं,
मुक्तिश्री नगराधि–नाथ–जिनपत्–युक्तोऽपवर्गप्रदः।
धर्मः सूक्ति–सुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयः श्रयालयः[3],
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विध–ममी कुर्वन्तु ते मंगलम्।।3।।

नाभेयादि जिनाः प्रशस्त–वदनाः[4] ख्याताश्चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वर–प्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णु–प्रतिविष्णु–लांगलधराः सप्तोत्तरा विंशतिः,
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टि–पुरुषाः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।4।।

ये सर्वौषधि[5]–ऋद्धयः सुतपसां[6] वृद्धिंगताः पञ्च ये,
ये चाष्टांग–महा–निमित्त–कुशलाश्चाष्टौ वियच्चारिणः[7]।
पञ्चज्ञान–धरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धिऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता मुनीवराः[8] कुर्वन्तु ते मंगलम्।।5।।

ज्योतिर्व्यन्तर–भावनामरगृहे, मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः[9],
जम्बूशाल्मलि–चैत्य–शाखिषु तथा वक्षाररूप्यादिषु।
इष्वाकार–गिरौ च कुण्डल–नगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।6।।

---

1. सिद्धीश्वराः, आचार्याः, 2. सुपाठकाः मुनिवराः, 3. चैत्यालयं श्रयालयं, 4. जिनाधिपास्त्रिभुवन, 5. सर्वौषध, 6. सुतपसो, 7. कुशला येऽष्टौ विधाश्चारणाः, 8. गणभृतः 9. तथा

कैलासे वृषभस्य निर्वृति–मही वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्य सज्जिनपतेः सम्मेद–शैलेऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्ध–विभवाः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।7।।

सर्पोहार–लता भवत्यसिलता सत्पुष्पदामायते,
सम्पद्येत रसायनं विषमपि – प्रीतिं विधत्ते रिपुः।
देवा[1] यान्ति वशं प्रसन्न मनसः किं वा बहुब्रूमहे,
धर्मादेव–नभोऽपि वर्षति नगैः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।8।।

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञान–भाक्।
यः कैवल्य–पुर–प्रवेश–महिमा सम्पादितः[2] स्वर्गिभिः,
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मंगलम्।।9।।

इत्थं श्रीजिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्य–सम्पत्करम्[3],
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस् तीर्थंकराणामुषः।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थ–कामान्विता,
लक्ष्मीराश्रयते व्यपाय–रहिता निर्वाण–लक्ष्मीरपि।।10।।

।। इति श्री मंगलाष्टक–स्तोत्रम् ।।

जल शुद्धि मंत्र –ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पद्म–महापद्म–तिगिंछ –केसरी–पुण्डरीक–महापुण्डरीक–गंगासिन्धु–रोहि–द्रोहितास्या–हरिद्–धरिकान्ता–सीतासीतोदा–नारी–नरकान्ता–सुवर्णकूला–रूप्यकूला–रक्ता–रक्तोदा–क्षीराम्भोनिधि–शुद्धजलं सुवर्णघटं प्रक्षालित–परिपूरितं नवरत्न–गंधाक्षत–पुष्पार्चितं ममोदकं पवित्रं कुरु कुरु झ्रं झ्रं झ्रौं झ्रौं वं वं मं मं हं हं क्षं क्षं लं लं पं पं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं सः स्वाहा।

हस्त प्रक्षालन मंत्र – ॐ ह्रीं असुजर सुजर भव स्वाहा हस्त प्रक्षालनं करोमि।

अमृत स्नान मंत्र – ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षणि अमृतं स्रावय स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय सं हं झ्वीं क्ष्वीं हं स: स्वाहा।

तिलक करण मन्त्र

पात्रेऽर्पितं चन्दनमौषधीशं, शुभ्रं सुगन्धाहृत–चञ्चरीकम्।
स्थाने नवांके तिलकाय चर्च्यं, न केवलं देहविकारहेतो:।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र: अ सि आ उ सा नम: मम यजमानस्य सर्वांगशुद्धि हेतव: नवतिलकं करोम्यहम्।

तिलक के नवस्थान – 1. शिखा, 2. मस्तक, 3. ग्रीवा, 4. हृदय, 5. दोनों भुजायें, 6. पीठ, 7. कान, 8. नाभि, 9. कलाई।

दिग्बन्धन

पूर्वदिशा में – ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां पूर्वदिशा–समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

आग्नेयदिशा में – ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं आग्नेयदिशा–समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

दक्षिणदिशा में – ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं ह्रूं दक्षिणदिशा–समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

नैऋत्यदिशा में – ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं नैऋत्यदिशा–समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

पश्चिमदिशा में – ॐ ह्र: णमो लोए सव्वसाहूणं ह्र: पश्चिमदिशा–समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

वायव्यदिशा में – ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां वायव्य दिशा–समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

उत्तरदिशा में – ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं उत्तरदिशा–समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

ऐशानदिशा में – ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं ह्रूं ऐशानदिशा–समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

अधोदिशा में – ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं अधोदिशा–समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

ऊर्ध्वदिशा में – ॐ ह्र: णमो लोए सव्वसाहूणं ह्र: ऊर्ध्वदिशा–समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

सर्वदिशा में – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र: णमो अरिहंताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र: सर्वदिशा–समागतान् विघ्नान् निवारय निवारय माम् एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

सर्वदिशा में रक्षामंत्र –ॐ ह्रूं क्ष्रूं फट् किरिटि किरिटि, घातय घातय, परविघ्नान् स्फोटय स्फोटय, सहस्रखण्डान् कुरु कुरु, परमुद्रां छिन्द छिन्द, परमंत्रान् भिन्द भिन्द, क्षां क्ष: वा: वा: ह्रूं फट् स्वाहा।

सर्वदिशा में शान्तिमंत्र –ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोष–कल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये नम: श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वपाप–प्रणाशनाय सर्वविघ्नविनाशनाय सर्वरोगापमृत्यु–विनाशनाय सर्वपरकृत–क्षुद्रोपद्रव–विनाशनाय सर्वक्षामडामर–विनाशनाय सर्वारिष्ट–शान्तिकराय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र: अ सि आ उ सा नम: माम् सर्वशान्तिं कुरु कुरु तुष्टिं पुष्टिं च कुरु कुरु स्वाहा।

पात्र अंगशुद्धि मंत्र –

शोधये सर्व–पात्राणि, पूजार्था–नपि वारिभि:।
समाहितो यथाम्नाय, करोमि सकलीक्रियाम्।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र: नमोऽर्हते श्रीमते पवित्रतर–जलेन पात्रशुद्धिं करोमि स्वाहा।

क्षेत्र आज्ञा एवं भूमिशुद्धि मंत्र – ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र: जिनगर्भगृह–क्षेत्रे धरित्री जाग्रतावस्थायां कुरु कुरु स्वाहा।

भूमिशुद्धि मंत्र –

ओं शोधयामि भूभागं, जिनधर्माभिरुत्सवे।
काल–धौतोज्ज्वल–स्थूल, कलशापूर्ण वारिणि।।

ॐ ह्रीं नम: सर्वज्ञाय सर्वलोकनाथाय धर्मतीर्थनाथाय परम–पवित्रेभ्य: शुद्धेभ्य: नम: पवित्र–जलेन भूमिशुद्धिं करोमि स्वाहा।

दाहिने हाथ में रक्षासूत्र बाँधने का मंत्र – ॐ नमोऽर्हते सर्वं रक्ष रक्ष ह्रूं फट् स्वाहा।

यज्ञोपवीतधारण मंत्र – ॐ नम: परमशान्ताय शान्तिकराय पवित्रीकरणाय अहं रत्नत्रयस्वरूपं यज्ञोपवीतं दधामि मम गात्रं पवित्रं भवतु अर्हं नम: स्वाहा।

मंगल कलश में सुपाड़ी आदि डालने का मंत्र – ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नम: मंगल कलशे पूंगादि फलादि प्रभृति वस्तूनि प्रक्षिपामीति इति स्वाहा।

मंगल कलश के ऊपर श्री फल रखने का मंत्र – ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षों क्षौं क्ष: नमोऽर्हते भगवते श्रीमते सर्व रक्ष रक्ष ह्रूं फट् स्वाहा।

मंगल कलश–स्थापन मन्त्र

ॐ श्रीमत् अर्हत् परमेश्वरोपदिष्ट शिष्टेष्टदयामूल–धर्मप्रभावक–यष्ट–याजक–प्रभृति–भव्यजनानां सद्धर्म श्री बलायुरारोग्यैश्वर्याभि–वृद्धिरस्तु। श्रीमज्जिनशासने भगवतो महति महावीर–वर्द्धमान–तीर्थंकरस्य धर्मतीर्थे श्रीमूलसंघे कुन्दकुन्दाम्नाये मध्यलोके जम्बूद्वीपे सुदर्शन–मेरोर्दक्षिण–भागे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे भारतदेशे...प्रान्ते... नगरे विविधालंकार–मंडित–यज्ञमण्डपे हुण्डावसर्पिणी काले दु:खं नाम्नि पंचमकालयुगे प्रवर्त्तमाने वीरनिर्वाण... संवत्सरे मासोत्तममासे... पक्षे...तिथौ...वासरे...जिनप्रतिमाया:

वीरनिर्वाण... संवत्सरे मासोत्तममासे... पक्षे...तिथौ...वासरे...जिनप्रतिमाया: सन्निधौ दिगम्बर-जैनाचार्य-श्री आदि-महावीर-विमल-सन्मति-विराग-विमर्शसागर परम्परायां मुनि-आर्यिका-श्रावक-श्राविकादि-चतुर्विध-संघसन्निधौ।... विधानोत्सवे निर्विघ्न-समाप्त्यर्थं सकलाभ्युदय नि:श्रेयस सिद्ध्यर्थं शुद्ध्यर्थं द्रव्य शुद्ध्यर्थं याज्ञ शुद्ध्यर्थं क्रिया-शुद्ध्यर्थं, शान्त्यर्थं पुण्याहवाचनार्थं नवरत्नगन्ध-पुष्पाक्षतादि-बीजपूरशोभित-शुद्धप्रासुक-जलपरिपूरित-मंगलकुम्भं मण्डपाग्रे स्वस्त्यै स्थापनं करोमि झं क्ष्वीं हं स: स्वाहा।

नोट – यह पढ़कर मण्डल के पूर्व-उत्तर कोने में जल, अक्षत, पुष्प, हल्दी, सुपारी, सवा रुपया, श्रीफल और पुष्पमाला सहित मंगलकलश श्रावक द्वारा स्थापित कराया जावे। इस कलश को पुण्याहवाचन कलश भी कहते हैं।

चारों कोनों पर कलश स्थापना का मंत्र –

ॐ आद्यानामाद्ये जम्बूद्वीपे-मेरोर्दक्षिणभागे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे भारतदेशे...प्रान्ते...नगरे.....जिनप्रतिमाया: सन्निधौ। ....विधानोत्सवे वीरनिर्वाण... संवत्सरे मासोत्तममासे..... पक्षे..... तिथौ.... वासरे... विधानकार्यस्य निर्विघ्न-समाप्त्यर्थं मण्डप भूमि शुद्ध्यर्थं पात्र शुद्ध्यर्थं क्रिया-शुद्ध्यर्थं, शान्त्यर्थं पुण्याहवाचनार्थं नवरत्नगन्धपुष्पाक्षतादि-बीजपूरादिशोभितम्...यजमानस्य हस्ताभ्यां मंगलकलश-स्थापनं करोमि इ्वीं क्ष्वीं हं स: मंगलं भवतु स्वाहा। ॐ ह्रीं स्वस्तये पुण्यकुम्भं स्थापयामि स्वाहा।

नांदीकुम्भ को सूत्र से बाँधने का मंत्र – ॐ नमो भगवते अ सि आ उ सा ऐं ह्रीं ह्रां ह्रीं संवौषट् त्रिवर्णसूत्रेण शान्तिकुभं वेष्टयामि।

चारों विदिशाओं में धूपघट स्थापन मंत्र – ॐ ह्रीं अष्टकर्म-भस्मीकरणाय सर्वदिग्वात-सुगंधिकरणाय दशांग-धूपक्षेपणार्थं ईशान-आग्नेय-नैऋत्य-वायव्य-कोणे धूपघटस्थापनं करोमि स्वाहा।

दीप स्थापना मंत्र–

रुचिरदीप्तिकरं शुभदीपकं, सकललोक–सुखाकर–मुज्ज्वलम्।
तिमिर जाल हरं प्रकरं सदा, किल धरामि सुमंगलकं मुदा।।

ॐ ह्रीं अज्ञान तिमिर हरं दीपकं स्थापयामीति स्वाहा।

सकलीकरण मन्त्र

(अंगुलियों में पंचपरमेष्ठी की स्थापना करें)

ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः।
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः।
ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः।
ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं अनामिकाभ्यां नमः।
ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः कनिष्ठिकाभ्यां नमः।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः करतलाभ्यां नमः।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः करपृष्ठाभ्यां नमः।

तदनन्तर–

अंग शुद्धि (दोनों हाथों से अंग स्पर्श करें)

ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां मम शीर्षं रक्ष रक्ष स्वाहा।

(यह मंत्र पढ़कर दाहिने हाथ से सिर का स्पर्श करें।)

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वदनं रक्ष रक्ष स्वाहा।

(यह मंत्र पढ़कर दाहिने हाथ से मुख का स्पर्श करें।)

ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं ह्रूं मम हृदयं रक्ष रक्ष स्वाहा।

(यह मंत्र पढ़कर दाहिने हाथ से हृदय का स्पर्श करें।)

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं मम नाभिं रक्ष रक्ष स्वाहा।

(यह मंत्र पढ़कर दाहिने हाथ से नाभि का स्पर्श करें।)

ॐ ह्रः णमो लोए सव्व साहूणं ह्रः मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा।

(यह मंत्र पढ़कर दाहिने हाथ से पैरों का स्पर्श करें।)

ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां माम् रक्ष रक्ष स्वाहा।

(यह मंत्र पढ़कर अपने शरीर का स्पर्श करें।)

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम वस्त्रं रक्ष रक्ष स्वाहा।

(यह मंत्र पढ़कर अपने वस्त्रों का स्पर्श करें।)

ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं ह्रूं मम पूजाद्रव्यं रक्ष रक्ष स्वाहा।

(यह मंत्र पढ़कर अपनी पूजन थाली का स्पर्श करें।)

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं मम स्थलं रक्ष रक्ष स्वाहा।

(यह मंत्र पढ़कर अपने खड़े होने की जगह की ओर देखें।)

ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः सर्व जगत् रक्ष रक्ष स्वाहा।

(यह मंत्र पढ़कर चुल्लू में जल लेकर सब ओर क्षेपण करें।)

नोट – इस तरह सकलीकरण से अपने शरीर को कवच पहनाकर सम्पूर्ण इष्ट–पूजादि मंत्रादि को करते हुए पूजक विघ्न से बाधित नहीं होता है।

सिद्धयन्त्र स्थापना मन्त्र

मध्ये तेजः ततः स्याद्, वलय–मथ–धनुः, संख्य–कोष्ठेषु पञ्च,
पूज्यान् संस्थाप्य वृते, तत उपरि–तने, द्वा–दशाम्भो–रुहाणि।
तत्र स्यु–मंगला, न्युत्तम–शरण–पदान्, पञ्च–पूज्या–मरर्षीन्,
धर्म–प्रख्याति भाजः, त्रि–भुवन–पतिना, वेष्ठयेदं कुशाढ्याम्।।

ॐ ह्रीं स्नपनपीठे विनायक/सिद्धयंत्रं स्थापनं करोमि स्वाहा।

चारों कोनों पर चार कलश स्थापना मंत्र– ॐ ह्रीं चतुष्कोणेषु चतुःकलशस्थापनं करोमि।

सिद्धयन्त्राभिषेक मन्त्र

स्नात्वा शुभाम्बर–धरः कृत–यत्न–योगात्,
यन्त्रं निवेश्य शुचि–पीठ–वरेऽभि–षिञ्चेत्।
ॐ भूर्भुवः स्व–रिह मंगल–यन्त्र–मेतत्,
विघ्नौद्य–वारक–महं परि–षेचयामि।।

ॐ भूर्भुवः स्वरिह विघ्नौघवारकं यन्त्रं वयं परिषेचयामः।

प्राकृत सिद्धभक्ति

असरीरा जीवघणा, उवजुत्ता दंसणे य णाणे य।
सायार-मणायारा, लक्खणमेयं तु सिद्धाणं।।1।।
मूलोत्तर-पयडीणं, बंधोदयसत्त-कम्म-उम्मुक्का।
मंगलभूदा सिद्धा, अट्ठगुणा तीदसंसारा।।2।।
अट्ठ-वियकम्म वियला, सीदीभूदा णिरंजणा णिच्चा।
अट्ठगुणा किदकिच्चा, लोयग्गणिवासिणो सिद्धा।।3।।
सिद्धा-णट्ठट्ठ-मला, विसुद्ध बुद्धीय लद्धि सब्भावा।
तिहुअण सिरसे हरया, पसियंतु भडारया सव्वे।।4।।
गमणागमण-विमुक्के, विहडिय-कम्म-पयडि संघारा।
सासह सुह संपत्ते, ते सिद्धा वंदिमो णिच्चं।।5।।
जय मंगल-भूदाणं, विमलाणं णाणदंसणमयाणं।
तइलोइसेहराणं, णमो सदा सव्व-सिद्धाणं।।6।।
सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवग्गहणं।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं।।7।।
तव सिद्धे णय-सिद्धे संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि।।8।।

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविहकम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीदा-णागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं अंचेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिनगुण-संपत्ति होउ मज्झं।

लघु अभिषेक पाठ

शोधये सर्वपात्राणि, पूजार्थानपि वारिभिः।
समाहितो यथाम्नाय, करोमि सकली क्रियाम्।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा पवित्रतर जलेन शुद्धिं करोमीति स्वाहा।

(जल से शुद्धि करें)

श्रीमज्जिनेन्द्र – मभिवन्द्य जगत्त्रयेशं,
स्याद्वादनायक – मनन्त चतुष्टयार्हम्।
श्री मूलसंघ – सुदृशां सुकृतैक हेतुः,
जैनेन्द्र यज्ञ विधिरेष मयाभ्यधायि।।1।।

ॐ ह्रीं अभिषेक प्रतिज्ञायां पुष्पांजलिं क्षिपामि।

सौगन्ध्य–सङ्गत–मधुव्रत झङ्कृतेन,
सम्वर्ण्य–मानमिव गन्धमनिन्द्य–मादौ।
आरोपयामि विबुधेश्वर–वृन्द–वन्द्य–
पादारविन्द–मभिवन्द्य जिनोत्तमानाम्।।2।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः मम सर्वांग शुद्धिं कुरु कुरु।

(यह पढ़कर चंदन से तिलक लगाना व हाथ धोना)

ये सन्ति केचिदिह दिव्य–कुल–प्रसूताः,
नागाः प्रभूत बल–दर्पयुता विबोधाः।
संरक्षणार्थ–ममृतेन शुभेन तेषां,
प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम्।।3।।

ॐ ह्रीं जलेनभूमिशुद्धिं करोमि स्वाहा।

(यह पढ़कर भूमि शुद्धि करें)

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः,
प्रक्षालितं सुरवरै – र्यदनेकवारम्।

अत्युद्य–मुद्यत–महं जिनपाद पीठं,
प्रक्षालयामि भव–सम्भव–तापहारि।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमते पवित्रतर जलेन पीठ प्रक्षालनं करोमि स्वाहा।

(जिसमें प्रतिमा विराजमान करना है उस थाली को धोवें)

श्री शारदा–सुमुख–निर्गत बीजवर्ण,
श्री मङ्गलीक–वर–सर्व जनस्य नित्यम्।
श्रीमत्स्वयं क्षयति तस्य विनाशविघ्नं,
श्रीकार–वर्ण–लिखितं जिन भद्रपीठे।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीकार लेखनं करोमि।

(जिसमें प्रतिमा विराजमान करना है उस थाली में 'श्री' लिखें)

यं पाण्डुकामल–शिलागतमादिदेव–
मस्ना – पयन्सुरवराः सुरशैलमूर्ध्नि।
कल्याण–मीप्सुरह–मक्षत तोय पुष्पैः।
सम्भावयामि पुर एव तदीय–बिम्बम्।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्रीवर्णे प्रतिमा स्थापनम् करोमि स्वाहा।

(यह पढ़कर श्रीवर्ण पर प्रतिमा स्थापन करना चाहिए)

सत्पल्लवार्चित–मुखान्–कलधौतरौप्य–
ताम्रारकूट – घटितान्पयसा सुपूर्णान्।
सम्वाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान्,
संस्थापयामि कलशाज्जिन वेदिकान्ते।।7।।

ॐ ह्रीं स्वस्तये चतुःकोणेषु कलश स्थापनं करोमि स्वाहा।

उदक–चंदन–तंदुल–पुष्पकैश्चरु–सुदीप–सुधूप–फलार्घकैः।
धवल मंगल गान–रवाकुले, जिनगृहे जिननाथ–महं यजे।।

ॐ ह्रीं श्री परमदेवाय अर्हत् परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्व. स्वाहा

दूरावनम्र सुरनाथ–किरीट–कोटी–
संलग्न–रत्न–किरणच्छवि–धूसराङ्घ्रिम्।
प्रस्वेद–ताप–मल–मुक्तिमपि प्रकृष्टैः,
भक्त्या जलैर्जिनपतिं, बहुधाभिषिञ्चे।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालसन्तं वृषभादि महावीर पर्यन्त चतुर्विंशति तीर्थंकर परंदेवं आद्यानामाद्ये–मध्यलोके–जम्बूद्वीपे–भरतक्षेत्रे–आर्य खण्डे–भारतदेशे...प्रदेशे...जिले... नगरे...मासे...पक्षे...तिथौ वासरे शुभदिने पौर्वाह्णिक समये मुन्यार्यिका श्रावक–श्राविकानां सकल कर्म क्षयार्थं जलेनाभिषिञ्चे नमः। (मुनि, आर्यिका, श्रावक–श्राविका जो तीर्थंकर भगवान के ऊपर जल की धारा देवें, देखें ताके कर्मन की क्षय।)

उदक–चंदन–तंदुल–पुष्पकैश्चरु–सुदीप–सुधूप–फलार्घकैः।
धवल मंगल गान–रवाकुले, जिनगृहे–जिननाथ महं यजे।।

ॐ ह्रीं अभिषेकान्ते वृषभादिवीरान्तेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

इष्टैर्मनोरथ–शतैरिव भव्य पुंसां,
पूर्णैः सुवर्ण कलशै–र्निखलै–र्वसानैः।
संसार सागर–विलंघन, हेतु–सेतु–
माप्लावये त्रिभुवनैक–पतिं जिनेन्द्रम्।।9।।

(यहाँ चारों कलश से अभिषेक करें)

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालसन्तं वृषभादि महावीर पर्यन्त चतुर्विंशति तीर्थंकर परंदेवं आद्यानामाद्ये–मध्यलोके–जम्बूद्वीपे–भरतक्षेत्रे–आर्य खण्डे–भारतदेशे...प्रदेशे...जिले...नगरे...मासे...पक्षे...तिथौ वासरे शुभदिने पौर्वाह्णिक समये मुन्यार्यिका श्रावक–श्राविकानां सकल कर्म क्षयार्थं जलेनाभिषिञ्चे नमः।

(मुनि, आर्यिका, श्रावक–श्राविका जो तीर्थंकर भगवान के ऊपर जल की धारा देवें, देखें ताके कर्मन की क्षय।)

पानीय – चंदन – सदक्षत – पुष्प पुंज,
नैवेद्य – दीपक – सुधूप – फल – व्रजेन।
कर्माष्टकं कथन वीर – मनंत शक्तिं,
संपूजयामि महसा महसां निधानम्।।

ॐ ह्रीं अभिषेकान्तेश्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नत्वा – मुहुर्निज करै – रमृतोपमेयै:,
स्वच्छै – र्जिनेन्द्र तव चन्द्र करावदातै:।
शुद्धांशुकेन विमलेन नितांतरम्ये,
देहे स्थितान् जलकणान् परिमार्जयामि।।

ॐ ह्रीं अमलांशुकेनजिनबिम्ब मार्जनं करोमि।

उदक–चंदन–तंदुल–पुष्पकैश्चरु–सुदीप–सुधूप–फलार्घकै:।
धवल मंगल गान–रवाकुले, जिनगृहे जिननाथ–महं यजे।।

ॐ ह्रीं सिंहासन स्थित अर्हत् देवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इतिश्री लघुअभिषेक पाठ)

लघु शान्तिधारा

ॐ नम: सिद्धेभ्य:। श्री वीतरागाय नम:। ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकराय द्वादशगण–परिवेष्टिताय, शुक्लध्यान–पवित्राय, सर्वज्ञाय, स्वयम्भुवे, सिद्धाय, बुद्धाय, परमात्मने परमसुखाय त्रैलोक्य–मही व्याप्ताय अनन्त–संसार–चक्रपरिमर्दनाय, अनन्त–दर्शनाय, अनन्त–ज्ञानाय, अनन्त वीर्याय, अनन्त–सुखाय, सिद्धाय, बुद्धाय, त्रैलोक्यवशंकराय सत्यज्ञानाय सत्यब्रह्मणे, धरणेन्द्र–फणामण्डल–मण्डिताय ऋष्यार्यिका–श्रावक–श्राविका–प्रमुख–चतुस्संघोपसर्ग–विनाशनाय घातिकर्मविनाशनाय अघातिकर्मविनाशनाय (शान्तिधारा कर्ता का नाम) **अपवादं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **मृत्युं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **अतिकामं** छिन्धि छिन्धि

भिन्धि भिन्धि। **रतिकामं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **बलिकामं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **क्रोधं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्व अग्निभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वशत्रुभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वोपसर्गं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वविघ्नं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वराज्यभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वचोरभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वदुष्टभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वमृगभयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वपरमंत्रं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वशूलरोगं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वक्षयरोगं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वकुष्ठरोगं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वक्रूररोगं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वनरमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वगजमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्व–अश्वमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वगोमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्व महिषमारिं**–छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वधान्यमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्ववृक्षमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वगुल्ममारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वपुष्पमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वफलमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वराष्ट्रमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वदेशमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वविषमारिं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्ववेताल शाकिनी भयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वमोहनीयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्व वेदनीयं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। **सर्वकर्माष्टकं** छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि।

ॐ सुदर्शन–महाराज–चक्रविक्रम–सत्त्व–तेजोबल–शौर्यवीर्यशान्तिं कुरु कुरु। **सर्वजीवानन्दनं** कुरु कुरु। **सर्वभव्यानंदनं** कुरु कुरु। **सर्वगोकुलानंदनं** कुरु कुरु। **सर्वराजानंदनं** कुरु कुरु। **सर्वग्राम–नगर–खेट–कर्वट–मटम्ब–पत्तण–द्रोणमुख–संवाहनानंदनं** कुरु कुरु। **सर्वलोकानंदनं** कुरु कुरु।

सर्वदेशानंदनं कुरु कुरु। **सर्वयजमानानंदनं** कुरु कुरु। **सर्वं दुःखं** हन हन दह दह पच पच कुट कुट शीघ्रं शीघ्रं।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु, व्याधिर्व्यसनवर्जितम्।
अभयं क्षेममारोग्यं, स्वस्तिरस्तु विधीयते।।

शिवमस्तु, कुलगोत्र–धन धान्य सदास्तु। चन्द्रप्रभ–वासुपूज्य–मल्लि–वर्द्धमान–पुष्पदंत–शीतल–मुनिसुव्रत–नेमिनाथ–पार्श्वनाथ इत्येभ्यो नमः।

(इत्यनेन मन्त्रेण नवग्रहाणां शान्त्यर्थं गन्धोदक–धारावर्षणम्।)

श्री शान्तिरस्तु। शिवमस्तु। जयोस्तु। नित्यमारोग्यमस्तु। सर्वेषां पुष्टिरस्तु। तुष्टिरस्तु, समृद्धिरस्तु। कल्याणमस्तु। सुखमस्तु। दीर्घायुरस्तु, कुलगोत्र धनधान्यं सदास्तु, श्री सद्धर्म–बल–आयु–आरोग्य–ऐश्वर्य अभिवृद्धिरस्तु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सम्पूर्णं कल्याणमंगलरूप मोक्ष पुरुषार्थश्च भवतुः।

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते प्रक्षीणाशेष दोष कल्मषाय दिव्यतेजो मूर्तये श्री शांतिनाथाय शांतिकराय सर्वविघ्न प्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्यु विनाशनाय सर्व परकृत क्षुद्रोपद्रव विनाशनाय सर्व क्षाम–डामर विनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः सर्व देशस्य चतुर्विध संघस्य तथैव सर्वविश्वस्य तथैव मम (शांति धारा कर्ता का नाम) सर्वशांति कुरु कुरु, तुष्टिं कुरु कुरु, पुष्टिं कुरु कुरु वषट् स्वाहा।

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्र–सामान्य–तपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः।।

(इति लघु शान्तिधारा)

विनय पाठ

इह विधि ठाड़ो होय के, प्रथम पढ़ै जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ।।1।।
अनंत चतुष्टय के धनी, तुम ही हो सिरताज।
मुक्तिवधु के कंत तुम, तीन भुवन के राज।।2।।
तिहुँ जग की पीड़ा हरन, भवदधि–शोषणहार।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिव–सुख के करतार।।3।।
हरता अघ अंधियार के, करता धर्म–प्रकाश।
थिरता–पद दातार हो, धरता निज गुण रास।।4।।
धर्मामृत उर जलधि सों, ज्ञानभानु तुम रूप।
तुमरे चरण–सरोज को, नावत तिहुँजग भूप।।5।।
मैं वन्दौं जिनदेव को, करि अति निर्मल भाव।
कर्मबन्ध के छेदने, और न कछु उपाव।।6।।
भविजन को भव–कूप तैं, तुम ही काढ़नहार।
दीन–दयाल अनाथ–पति, आतम गुण भंडार।।7।।
चिदानन्द निर्मल कियो, धोय कर्मरज मैल।
सरल करी या जगत में, भविजन को शिव–गैल।।8।।
तुम पद–पंकज पूजतैं, विघ्न–रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरैं, विष निरविषता थाय।।9।।
चक्री खगधर इन्द्रपद, मिलैं आप तैं आप।
अनुक्रम करि शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप।।10।।
तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन।
जन्म–जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन।।11।।

पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव।
अंजन से तारे कुधी, जय जय जय जिनदेव।।12।।
थकी नाव भवदधि विषैं, तुम प्रभु पार करेव।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव।।13।।
राग सहित जग में रुल्यो, मिले सरागी देव।
वीतराग भेट्यो अबैं, मेटो रोग कुटेव।।14।।
कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यंच अजान।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान।।15।।
तुमको पूजैं सुरपती, अहिपति नरपति देव।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव।।16।।
अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार।
मैं डूबत भव सिन्धु में, खेव लगाओ पार।।17।।
इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान।
अपनो विरद निहारिकैं, कीजे आप समान।।18।।
तुमरी नेक सुदृष्टि तैं, जग उतरत है पार।
हा हा डूब्यो जात हों, नेक निहार निकार।।19।।
जो मैं कहहूँ और सों, तो न मिटैं उरझार।
मेरी तो तोसों बनी, तातैं करौं पुकार।।20।।
वंदों पाँचों परमगुरु सुरगुरु वंदत जास।
विघनहरन मंगलकरन, पूरन परम प्रकाश।।21।।
चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय।
शिवमग साधक साधु नमि, रच्यों पाठ सुखदाय।।22।।
मंगल मूरति परम पद, पंच धरो नित ध्यान।
हरो अमंगल विश्व का, मंगलमय भगवान।।23।।

मंगल जिनवर पद नमो, मंगल अर्हत देव।
मंगलकारी सिद्ध पद, सो वन्दौं स्वयमेव।।24।।
मंगल आचारज मुनि, मंगल गुरु उवझाय।
सर्व साधु मंगल करो, वन्दों मन–वच–काय।।25।।
मंगल सरस्वति मात का, मंगल जिनवर धर्म।
मंगलमय मंगल करो, हरो असाता कर्म।।26।।
या विधि मंगल से सदा, जग में मंगल होत।
मंगल 'नाथूराम' यह, भव सागर दृढ़ पोत।।27।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।)
(यहाँ पर नौ बार णमोकार मंत्र जपना चाहिये)

पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु।
णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।
ॐ ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं।
चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहंते सरणं पव्वज्जामि,
सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि,
केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा। (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

मंगल विधान

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत् पंच–नमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते।।1।।
अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः।।2।।
अपरा – जित – मंत्रोऽयं, सर्व–विघ्न–विनाशनः।
मंगलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मंगलं मतः।।3।।
एसो पंच–णमो–यारो, सव्व–पावप्पणा–सणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होई मंगलं।।4।।
अर्ह – मित्यक्षरं ब्रह्म, – वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्ध–चक्रस्य सद्–बीजं, सर्वतः प्रणमाम्यहम्।।5।।
कर्माष्टक – विनिर्मुक्तं, मोक्ष–लक्ष्मी–निकेतनं।
सम्यक्त्वादि–गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम्।।6।।
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी–भूत–पन्नगाः।
विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे।।7।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

पंचकल्याणक का अर्घ

उदक–चंदन–तंदुल–पुष्पकैश्, चरु–सुदीप–सुधूप–फलार्घकैः।
धवल–मंगल–गान–रवाकुले, जिनगृहे कल्याण–महं यजे।।

ॐ ह्रीं श्री भगवतो गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपंचकल्याणकेभ्योअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचपरमेष्ठी का अर्घ

उदक–चंदन–तंदुल–पुष्पकैश्, चरु–सुदीप–सुधूप–फलार्घकैः।
धवल–मंगल–गान–रवाकुले, जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय–सर्व साधुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनसहस्रनाम का अर्घ

उदक–चंदन–तंदुल–पुष्पकैश्, चरु–सुदीप–सुधूप–फलार्घकैः।
धवल–मंगल–गान–रवाकुले, जिनगृहे जिननाम यजामहे।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिन–अष्टोत्तर–सहस्र–नामेभ्योअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवाणी का अर्घ

उदक–चंदन–तंदुल–पुष्पकैश्, चरु–सुदीप–सुधूप–फलार्घकैः।
धवल–मंगल–गान–रवाकुले, जिनगृहे जिनसूत्र–महं यजे।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्राणि तत्त्वार्थसूत्र–दशाध्याय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आचार्य श्री विमर्शसागर जी का अर्घ

उदक–चंदन–तंदुल–पुष्पकैश्, चरु–सुदीप–सुधूप–फलार्घकैः।
धवल–मंगल–गान–रवाकुले, जिनगृहे जिनसूरीन्द्रं यजामहे।।

ॐ ह्रीं श्री शताष्टगुणसहित आचार्यश्री विमर्शसागरादि–त्रिन्यून–नवकोटि–मुनिवरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

श्रीमज्–जिनेन्द्र–मभि–वंद्य–जगत्–त्रयेशं,
स्याद्वाद – नायक – मनन्त – चतुष्ट – यार्हम्।
श्रीमूल – संघ – सुदृशां सुकृतैक – हेतुः,
जैनेन्द्र–यज्ञ–विधि–रेष मयाऽभ्यधायि।।1।।

स्वस्ति त्रिलोक – गुरवे जिन–पुंगवाय,
स्वस्ति स्वभाव – महिमोदय–सुस्थिताय।
स्वस्ति प्रकाश–सहजोर्जित–दृङ्–मयाय,
स्वस्ति प्रसन्न–ललिताद्–भुत–वैभवाय।।2।।

स्वस्त्युच्छलद्–विमल–बोध–सुधा–प्लवाय,
स्वस्ति स्वभाव–परभाव–विभासकाय।

स्वस्ति त्रिलोक–विततैक–चिदुद्–गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल–सकलायत–विस्तृताय।।3।।

द्रव्यस्य शुद्धि–मधि गम्य यथानुरूपं,
भावस्य शुद्धि–मधिका–मधिगन्तु–कामः।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य – वल्गन्,
भूतार्थ–यज्ञ–पुरुषस्य करोमि यज्ञम्।।4।।

अर्हन् पुराण – पुरुषोत्तम – पावनानि,
वस्तून्यनून–मखिलान्ययमेक एव।
अस्मिञ् ज्वलद्–विमल केवल बोध वह्नौ,
पुण्यं समग्र–मह–मेक–मना जुहोमि।।5।।

ॐ ह्रीं विधियज्ञ प्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पांजलिं क्षिपामि।

स्वस्ति मंगल पाठ

श्री वृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अजितः।
श्री संभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अभिनन्दनः।
श्री सुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री पद्मप्रभः।
श्री सुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री चन्द्रप्रभः।
श्री पुष्पदंतः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शीतलः।
श्री श्रेयान् स्वस्ति, स्वस्ति श्री वासुपूज्यः।
श्री विमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अनन्तः।
श्री धर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शान्तिः।
श्री कुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अरनाथः।
श्री मल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री मुनिसुव्रतः।
श्री नमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री नेमिनाथः।
श्री पार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री वर्द्धमानः।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

परमर्षि स्वस्ति मंगल पाठ

(प्रत्येक श्लोक के बाद पुष्प क्षेपण करें)

नित्याप्रकम्पाद्भुतकेवलौघाः, स्फुरन्मनःपर्यय–शुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञान–बल–प्रबोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।1।।
कोष्ठस्थ–धान्योपममेक–बीजं, संभिन्न–संश्रोतृ–पदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धि–बलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।2।।
संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरा, दास्वादन–घ्राण–विलोकनानि।
दिव्यान्–मतिज्ञान–बलाद्वहन्तः, स्वस्ति क्रियासुःपरमर्षयो नः।।3।।
प्रज्ञा–प्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः, प्रत्येक–बुद्धाः दश–सर्व–पूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टांग–निमित्त विज्ञाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।4।।
जंघानल–श्रेणि–फलाम्बु–तन्तु, प्रसून–बीजांकुर–चार–णाह्वाः।
नभोऽङ्गण–स्वैर–विहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।5।।
अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि, लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि।
मनो–वपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।6।।
सकाम–रूपित्व–वशित्व–मैश्यं, प्राकाम्य–मन्तर्द्धि–मथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघात–गुणप्रधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।7।।
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं, घोरं तपो घोर पराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोर गुणाश्चरंतः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।8।।
आमर्ष–सर्वौष–धयस्तथाशी–र्विषाविषा–दृष्टि–विषा–विषाश्च।
सखिल्लविड्जल्ल–मलौषधीशाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।9।।
क्षीरं स्रवंतोऽत्र घृतं स्रवंतो, मधुस्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवंतः।
अक्षीण–संवास–महानसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।10।।

इति परमर्षि स्वस्ति मंगल विधानं परिपुष्पांजलिं क्षिपामि।

(कायोत्सर्गं करोम्यहम्)

देव–शास्त्र–गुरु पूजा

(रचयिता–भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज)

हे आत्मज्ञ! सर्वज्ञ प्रभो! शुद्धात्मनिधि को प्रगटाया।
जड़द्रव्य–भाव नोकर्मों की, संतति को क्षण में विघटाया।।
जिनवाणी में सम्यक् तत्त्वों का, नित शीतल निर्झर झरता।
निर्ग्रंथ गुरु का शुभ दर्शन, अन्तरमन का कालुष हरता।।
शुभ तीन महानिधियों को पा, रत्नत्रय निधि प्रगटाऊँगा।
श्री देवशास्त्र निर्ग्रंथ गुरु की, पूजा नित्य रचाऊँगा।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह! अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह! अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(परिपुष्पांजलिं क्षिपामि)

क्षीरोदधि से, गंगाजल से, तन को स्नान कराया है।
सम्यक्त्व शुद्धजल से अबतक, आतम को न नहलाया है।।
मिथ्यात्व असंयम भावों की, परिणति से मुक्त करो स्वामिन्।
निर्मल जल चरणों में अर्पित, हमको सम्यक्त्व वरो स्वामिन्।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलम् निर्वपामीति स्वाहा।

अब तक इन्द्रिय विषयों में ही, उपयोग मेरा रमता आया।
स्वामिन्! जड़ के आकर्षण से, चारों गति में भ्रमता आया।।
अब भेदज्ञान का चंदन ले, भवताप मिटाने आया हूँ।
अशरीरी सिद्ध प्रभु जैसी, स्थिरता पाने आया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

भव–भव में पाये पद अनन्त, तृष्णा न शान्त हुई मेरी।
पद पा सोचूँ 'मैं भी कुछ हूँ', यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी।।
अविनाशी अक्षय पद पाने, अक्षत का अर्घ्य चढ़ाता हूँ।
चैतन्यधाम में रहूँ सदा, नित यही भावना भाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर भोगों के ईंधन से, क्या काम अग्नि बुझ सकती है।
जितना ईंधन डालो इसमें, यह उतनी तेज धधकती है।।
हूँ चिदानंद चिद्रूप शुद्ध, निज ब्रह्मचर्य में वास करुँ।
चरणों में सुमन समर्पित हैं, इस कामभाव का नाश करुँ।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म असंख्य प्रदेशों से, शमरस के झरने झरते हैं।
पी तृप्त हुआ करते ज्ञानी, जो निज में सदा विचरते हैं।।
मैं क्षुधारोग से पीड़ित हूँ, उपचार कराने आया हूँ।
नैवेद्य समर्पित चरणों में, निज समरस पीने आया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म प्रकाशी ज्ञान दीप, समकित से ज्योतिर्मय होता।
मिथ्यात्व तिमिर के नशते ही, अनुभव शुद्धात्म प्रखर होता।।
निज द्रव्य और गुण पर्यय से, इक क्षण अभेदता प्राप्त करूँ।
ज्योतिर्मय दीप समर्पित है, दर्शन मोहान्ध समाप्त करुँ।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म तत्त्व में तन्मयता, निश्चय तप आग जलाती है।
तब सहज शुभाशुभ कर्मों की, कालुष उसमें जल जाती है।।
शुभ धूप दशांग चढ़ाता हूँ, मेरी शुद्ध परिणति अन्वय हो।
कर्मों की कालुष जल जाये, शुद्धात्म तत्त्व में तन्मय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म निराकुल सुख यह फल, शुद्धात्म ध्यान से फलता है।
निज वीतराग की परिणति से, यह मोक्ष महाफल मिलता है।।
अविनाशी ज्ञान शरीरी बन, निज में अनंत बल प्रगटाऊँ।
अर्पित करता फल चरणों में, निर्भार अतीन्द्रिय फल पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो महामोक्ष-फलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज परम पारिणामिक स्वभाव, ज्ञायक होकर प्रगटाया है।
अरिहंत प्रभु की वाणी में, शुद्धात्म सार यह आया है।।
निज परम पारिणामिक स्वभाव, ऐसा अनर्घ्य पद मिल जाये।
शुभ अर्घ्य समर्पित करता हूँ, चेतन गुण बगिया खिल जाये।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दर्शन-ज्ञानोपयोग युगपत, तिहुँकालों सहज प्रवर्त रहा।
शुद्धात्म अतीन्द्रिय सुख प्रतिक्षण, नूतन-नूतन अनुवर्त रहा।।

सम्पूर्ण द्रव्य-सहभावी-गुण, उनकी क्रमवर्ती-पर्यायें।
परिपूर्ण ज्ञान में प्रतिबिम्बित, सम्बन्ध सहज ज्ञानी गायें।।

अविनाशी अनुपम अचल निधि "श्री" अन्तरंग में हुई प्रगट।
जब कर्म घातिया नष्ट हुए, थी इनकी भी सामर्थ्य विकट।।

शुद्धात्म ध्यान की ले कुठार, संवर जब-जब आगे आता।
आस्रव के पैर ठिठक जाते, निर्जरा तत्त्व हँसकर जाता।।

शुद्धात्म ध्यान तप की महिमा, प्रभु सहज आपने पाई है।
शुद्धात्म ध्यान मैं भी पाऊँ, मन में प्रभु यही समाई है।।

निज ज्ञायक प्रभु की प्रभुता को, ज्ञायक बनकर ही पाऊँगा।
शुद्धात्म प्रदेशों का अमृत, पीकर अमूर्त प्रगटाऊँगा।।

हूँ चिदानंद चैतन्यप्रभु, यह बात आपने बतलाई।
शुद्धात्म सार का कथन जहाँ, वह जिनवाणी माँ कहलाई।।

प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, में सार वही।
द्रव्यानुयोग जिसकी महिमा, कहता उसके अनुसार वही।।

स्याद्वादमयी जिनवाणी माँ, जो अनेकान्त को कहती है।
सच कहता प्रभु सच्ची श्रद्धा, मेरे अन्तस में रहती है।।

जिनवाणी माँ को पाकर ही, कलिकाल हुआ मंगल मेरा।
प्रभु आप विदेह विराजे हो, फिर भी सान्निध्य मुझे तेरा।।

जिनवाणी माँ के आश्रय से, निर्ग्रंथ गुरु का दर्शन है।
शुद्धात्मलीन इन श्रमणराज, चरणों का नित स्पर्शन है।।

चैतन्यराज की महिमा को, इन श्रमणराज ने जाना है।
शुद्धात्म सरोवर की निधियाँ, पाना यह मन में ठाना है।।

शुद्धात्म तत्त्व का कथन सार, श्री गुरु मुख से जब झरता है।
मन हिरण आत्म उपवन में तब, नित सहज कुलाँचें भरता है।।

हे तपोमूर्ति! निर्ग्रंथ गुरु, मेरा अन्तरतम दूर करो।
शुद्धात्म तत्त्व को प्राप्त करूँ, मन में भक्ति भरपूर करो।।

हे देव–शास्त्र निर्ग्रंथ गुरु, पूजन में हर्षित अन्तरमन।
सम्यक् 'विमर्श' नित शरण मिले, स्वीकारो बारम्बार नमन।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

प्रभु–पूजा प्रभु ध्यान से, हो निर्मल परिणाम।
स्वर्गादिक सुख भोगकर, मिले मोक्ष निष्काम।।

(परिपुष्पांजलिं क्षिपामि)

अर्घावली

विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर का अर्घ

जल फल आठों दरब अरघ कर प्रीति धरी है।
गणधर – इन्द्रनिहूँ तैं थुति पूरी न करी है।।
'द्यानत' सेवक जानके (हो) जग तैं लेहु निकार।।
सीमंधर जिन आदि ले बीस विदेह मँझार।।
श्री जिनराज हो भव–तारण तरण जिहाज।।

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अकृत्रिम चैत्यालयों का अर्घ

कृत्या–कृत्रिम–चारु–चैत्य–निलयान्, नित्यं त्रिलोकी–गतान्,
वन्दे भावन–व्यन्तरान् द्युतिवरान्, कल्पामरा–वासगान्।।
सद् – गन्धाक्षत – पुष्प – दाम – चरुकैः सद्दीपधूपैः फलैर्,
नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा, दुष्कर्मणां शान्तये।।
सात करोड़ बहत्तर लाख सुभवन जिन पाताल में।
मध्यलोक में चार सौ अट्ठावन, जजों अघमल टाल के।
अब लख चौरासी सहस सन्तानवें, अधिके तेईस रु कहे।
बिन संख ज्योतिष व्यन्तरालय, सब जजों मन वच ठहे।

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमजिनबिम्बेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्ध परमेष्ठी का अर्घ

गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रत–गणैः, संगं वरं चन्दनं,
पुष्पौघं विमलं सदक्षत–चयं रम्यं, चरुं दीपकम्।

धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये,
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं, सेनोत्तरं वाञ्छितम्।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध-चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्च्य पूजन का अर्घ

अष्टम वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये।
सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज में निजगुण प्रकट किये।।
यह अर्घ्य समर्पण करके मैं, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो! विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्च्य चौबीसी का अर्घ

जल फल आठों शुचिसार ताको अर्घ करों,
तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष वरों।
चौबीसों श्री जिनचंद, आनन्दकंद सही,
पद जजत हरत भव फंद, पावत मोक्ष मही।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरान्त-चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तीस चौबीसी का अर्घ

द्रव्य आठों जु लीना है, अर्घ कर में नवीना है,
पूजतां पाप छीना है, भानुमल जोर कीना है।
दीप अढ़ाई सरस राजै, क्षेत्र दश ता-विषै छाजै,
सातशत बीस जिनराजे, पूजतां पाप सबै भाजै।।

ॐ ह्रीं पाँच भरत, पाँच ऐरावत इन दस क्षेत्रों में भूत-भविष्यत्-वर्तमान सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदिनाथ भगवान् का अर्घ

शुचि निर्मल नीरं गन्ध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरषाय।
दीप धूप फल अर्घ सु लेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय।।
श्री आदिनाथ के चरण कमल पर, बलि–बलि जाऊँ मन वच काय।
हे करुणानिधि! भवदुःख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पाय।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पद्मप्रभ भगवान् का अर्घ

जल फल आदि मिलाय गाय गुन, भगत भाव उमगाय।
जजों तुमहिं शिवतियवर जिनवर आवागमन मिटाय।।
मन वच तन त्रयधार देत ही जनम जरामृत जाय।
पूजों भावसों, श्रीपद्मनाथ पदसार, पूजों भावसों।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चन्द्रप्रभ भगवान् का अर्घ

सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमों।
पूजों अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनि गमों।।
श्रीचंदनाथ दुति चन्द, चरनन चंद लगे,
मन वच तन जजत अमंद, आतमजोति जगे।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री वासुपूज्य भगवान् का अर्घ

जलफल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई।
शिवपदराज हेत हे श्रीपति! निकट धरों यह लाई।।
वासुपूज्य वसुपूज तनुज पद, वासव सेवत आई।
बालब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सन्मुख धाई।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शान्तिनाथ भगवान् का अर्घ

वसुद्रव्य सँवारी, तुम ढिंग धारी, आनन्दकारी दृग–प्यारी।
तुम हो भवतारी, करुणा धारी, यातैं थारी, शरनारी।।
श्री शान्तिजिनेशं, नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं, चक्रेशं।
हनि अरि चक्रेशं, हे गुणधेशं, दयामृतेशं मक्रेशं।।

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान् का अर्घ

जलगंध आदि मिलाय आठों दरब अरघ सजों वरों।
पूजों चरनरज भगतिजुत, जातें जगत सागर तरों।।
शिवसाथ करत सनाथ सुव्रतनाथ, मुनि गुनमाल हैं।
तसु चरन आनन्दभरन तारण, तरन विरद विशाल हैं।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्व. स्वाहा।

श्री नेमिनाथ भगवान् का अर्घ

जल फल आदि साज शुचि लीने, आठों दरब मिलाय।
अष्टम छिति के राज करनकों, जजों अंग वसु नाय।।
मन वच तनतें धार देत ही, सकल कलंक नशाय।
दाता मोक्ष के, श्री नेमिनाथ जिनराय, दाता मोक्ष के।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पार्श्वनाथ भगवान् का अर्घ

नीरगंध अक्षतान् पुष्प चारु लीजिये।
दीप धूप श्रीफलादि अर्घ तैं जजीजिये।।
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा।
दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री महावीर भगवान् का अर्घ

जल फल वसु सजि हिमथार, तन मन मोद धरों।
गुण गाऊँ भवदधि तार, पूजत पाप हरों।।
श्री वीर महाअतिवीर सन्मति नायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर सन्मति दायक हो।।

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री बाहुबलि भगवान् का अर्घ

हूँ शुद्ध निराकुल सिद्धों सम भवलोक हमारा वासा ना।
रिपु रागरु द्वेष लगे पीछे, यातें शिवपद को पाया ना।।
निज के गुण निज में पाने को, प्रभु अर्घ संजोकर लाया हूँ।
हे बाहुबली! तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुबली-जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच बालयति तीर्थंकर भगवान् का अर्घ

सजि वसुविधि द्रव्य मनोज्ञ अरघ बनावत हैं।
वसुकर्म अनादि संयोग, ताहि नशावत हैं।।
श्री वासुपूज्य-मलि-नेम, पारस वीर-अति।
नमूँ मन-वच-तन धरि प्रेम पाँचों बालयति।।

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्व. स्वाहा।

सोलहकारण का अर्घ

जल फल आठों दरब चढ़ाय 'द्यानत' वरत करों मन लाय।
परमगुरु हो, जय-जय नाथ परम गुरु हो।।
दरश-विशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर पद पाय।
परमगुरु हो, जय-जय नाथ परम गुरु हो।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचमेरु का अर्घ

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।
पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा जी को करूँ प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरु-सम्बन्धि अशीति जिन-चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अनर्घपद-प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वरद्वीप का अर्घ

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हों।
'द्यानत' कीज्यो शिवखेत, भूमि समरपतु हों।।
नन्दीश्वर श्री जिनधाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द भाव धरों।।
नन्दीश्वर द्वीप महान चारों दिशि सोहें।
बावन जिनमन्दिर जान सुर-नर-मन मोहें।।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरदिक्षु द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दशलक्षण का अर्घ

आठों दरब संवार, 'द्यानत' अधिक उछाह सों।
भव-आताप निवार, दश-लक्षण पूजों सदा।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्व. स्वाहा।

रत्नत्रय का अर्घ

आठ दरब निरधार, उत्तम सों उत्तम लिये।
जनम रोग निरवार सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयाय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तर्षि का अर्घ

जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सु लावना।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित, अर्घ कीजे पावना।।
मन्वादि चारण–ऋद्धि–धारक, मुनिन की पूजा करूँ।
ता करें पातक हरें सारे, सकल आनंद विस्तरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री मनु–सुरमनु–श्रीनिचय–सर्वसुन्दर–जयवान्–विनयलालस–जयमित्र–सप्तर्षिभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्वाण क्षेत्र का अर्घ

जल गंध अक्षत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरों।
'द्यानत' करो निरभय जगत सों, जोर कर विनती करों।।
सम्मेदगढ़ गिरनार चंपा पावापुर कैलाश कों।
पूजों सदा चौबीस जिन, निर्वाण भूमि निवास कों।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकर–निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्व. स्वाहा।

कुन्दप्रभ कूट (शान्तिनाथ कूट)

शांतिनाथ जिनराज का, कुन्द कूट है जेह।
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह।।

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 9 कोड़ाकोड़ी 9 लाख 9 हजार 999 मुनिभ्यो (इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविन्द को मेरा मन, वचन, काय से बारम्बार नमस्कार हो) जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस्वती का अर्घ

जल चन्दन अक्षत फूल चरु, अरु दीप धूप अति फल लावे।
पूजा को ठानत जो तुम जानत, सो नर 'द्यानत' सुख पावै।।

तीर्थंकर की ध्वनि, गणधर ने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञान मई।
सो जिनवर वानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्व. स्वाहा।

आचार्य श्री विरागसागर जी का अर्घ

शुभ भावों का निर्मल जल है, विनय भाव का है चंदन।
गुरु वंदन ही अक्षत है, भक्ति सुमन का अभिनंदन।।
मन वच तन से आत्म समर्पण, मोह क्षोभ का शमन करूँ।
परम पूज्य आचार्य शिरोमणि, विराग सिंधु जी को नमन करूँ।।

ॐ ह्रूँ परम पूज्य शुद्धोपयोगी संत सूरिगच्छाचार्य श्री विरागसागर जी महामुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आचार्य श्री विमर्शसागर जी का अर्घ

भावों का अर्घ चढ़ाने गुरु चरणों में आये हैं।
निज अनर्घ पद की चाह लिये झोली फैलाये हैं।
शुभ अर्घ्य चढ़ा जीवन में रत्नत्रय प्रगटायेंगे।
गुर विमर्श के गुणों की मंगल गीता गायेंगे।
गुरु की पूजा रचायेंगे, मंगल गीता गायेंगे।।

ॐ ह्रूँ परम पूज्य भावलिंगी संत श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिन्यून नवकोटि मुनिराजों का अर्घ

क्षीण किया इस नश्वर तन को, करके उग्र तपश्चर्या।
दुर्लभ उत्तम धर्मध्यान और, शुक्ल ध्यान को प्राप्त किया।।
रत्नत्रय में रमण करें जो, तपो अंगना करें वरण।
मोक्षमार्ग दर्शायक होवें, वंदनीय साधु भगवन्।।

ॐ ह्रः त्रिन्यून नवकोटि मुनिवरेभ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्तामर विधान पूजन

मोक्षसौख्यस्य कर्तृणां, भोक्तृणां शिवसम्पदाम्।
आह्वाननं प्रकुर्वेऽहं, जगच्छान्ति विधायिनाम् ।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महावीजाक्षरसम्पन्न! श्रीवृषभजिनेन्द्रदेव! मम हृदये अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वाननम्।

देवाधिदेवं वृषभं जिनेन्द्रं, इक्ष्वाकुवंशस्य परं पवित्रं।
संस्थापयामीहपुरः प्रसिद्धं, जगत्सुपूज्यं जगतां पतिं च।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महावीजाक्षरसम्पन्न! श्रीवृषभजिनेन्द्रदेव! मम हृदये अवतर अवतर तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। इति स्थापनम्।

कल्याणकर्ता, शिवसौख्यभोक्ता, मुक्तेःसुदाता, परमार्थयुक्तः।
यो वीतरागो, गतरोषदोषः, तमादिनाथं, निकटं करोमि।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महावीजाक्षरसम्पन्न! श्रीवृषभजिनेन्द्रदेव! मम हृदये समीपे सन्निहितो भव भव वषट्। इति सन्निधिकरणम्।

अथाष्टकम्

(शार्दूलविक्रीडित)

गाङ्गेया यमुना–हरित्सुसरिताम्, सीतानदीया तथा,
क्षीराब्धि–प्रमुखाब्धि–तीर्थमहिता, नीरस्य हैमस्य च।
अम्भोजीय–पराग–वासितमहद्गन्धस्य धारा सती,
देया श्रीजिनपादपीठकमलस्याग्रे सदा पुण्यदा।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय जलम् निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखण्डाद्रिगिरौ भवेन गहने, ऋक्षैः, सुवृक्षै–र्घनैः,
श्रीखण्डेन सुगन्धिना भवभृतां, सन्ताप–विच्छेदिना ।
काश्मीर–प्रभवैश्च कुंकुमरसैः, घृष्टेन नीरेण वै,
श्रीमाहेन्द्र–नरेन्द्र–सेवितपदं, सर्वज्ञदेवं यजे ।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय चन्दनम् निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीशाल्युद्भवतन्दुलैः सुविलसद्–गन्धै र्जगल्लोभकैः,
श्री देवाब्धि–सरूप–हार–धवलै, र्नेत्रै र्मनोहारिभिः।
सौधौतैरतिशुक्ति–जातिमणिभिः, पुण्यस्य भागैरिव,
चन्द्रादित्यसमप्रभं प्रभुमहो, सञ्चर्चयामो वयम्।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मन्दाराब्ज–सुवर्णजाति–कुसुमैः, सेन्द्रीयवृक्षोद्भवै,
येषां गन्ध–विलुब्ध–मत्त–मधुपैः, प्राप्तं प्रमोदास्पदम्।
मालाभिः प्रविराजिभिः जिन! विभो र्देवाधिदेवस्य ते,
सञ्चर्चे चरणारविन्द–युगलं, मोक्षार्थिनां मुक्तिदम्।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय पुष्पम् निर्वपामीति स्वाहा।

शाल्यन्नं घृतपूर्ण–सर्पि–सहितं, चक्षु–र्मनो–रञ्जकम्,
सुस्वादुं त्वरितोद्भवं मृदुतरं, क्षीराज्यपक्वं वरम्।
क्षुद्रोगादिहरं सुबुद्धिजनकं, स्वर्गापवर्ग प्रदम्,
नैवेद्यं जिन–पाद–पद्म–पुरतः, संस्थापयेऽहं मुदा।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

अज्ञानादि–तमोविनाशन–करैः, कर्पूरदीप्तै वरैः,
कार्पासस्य विवर्तिकाग्रविहितै, र्दीपैः प्रभाभासुरैः।
विद्युत्कान्ति विशेष–संशय–करैः, कल्याण–सम्पादकैः,
कुर्यादार्ति–हरार्तिकां जिन! विभो! पादाग्रतो युक्तितः।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय दीपम् निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीकृष्णागरु–देवतारु–जनितैः, धूमध्वजोद्वर्तिभिः,
आकांश प्रति व्याप्तधूम्रपटलैः, आह्वानितैः षट्पदैः।

यः शुद्धात्म–विबुद्ध–कर्मपटलोच्छेदेन जातो जिनः,
तस्यैव क्रमपद्मयुग्मपुरतः, सन्धूपयामो वयम्।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय धूपम् निर्वपामीति स्वाहा।

नारिंङ्गाम्र–कपित्थ–पूग–कदली–द्राक्षादि–जातैः फलैः,
चक्षुश्चित्तहरैः प्रमोदजनकैः, पापापहै र्देहिनाम्।
वर्णाद्यैः मधुरैः सुरेशतरुजैः, खर्जूर–पिण्डैस्तथा,
देवाधीश–जिनेश–पादयुगलं, सम्पूजयामि क्रमात्।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय फलम् निर्वपामीति स्वाहा।

नीरैश्चन्दन–तन्दुलैः सुसघनैः, पुष्पैः प्रमोदास्पदैः,
नैवेद्यै र्नवरत्नदीपनिकरै, र्धूमैस्तथा धूपजैः ।
अर्घं चारुफलैश्च मुक्तिफलदं, कृत्वा जिनाङ्घ्रि–द्वये,
भक्त्या श्रीमुनिसोमसेनगणिना, मोक्षो मया प्रार्थितः ।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री भक्तामर जी विधान पूजा

जय आदि ब्रह्म, जय आदि विष्णु, जय आदि महेश्वर तुम्हें नमन।
जय आदि जिनेश्वर, जय परमेश्वर, सर्व सुरेश्वर तुम्हें नमन।।
आचार्य मानतुंग स्वामी ने, भक्तामर में तुमको गाया।
मैं भी सम्यक् फल पाने को, मंगल पूजा करने आया।।
हे नाथ! क्लीं बीजाक्षर से, स्तुति करता गुण गाता हूँ।
अपने निर्मल हृदयासन पर, भक्ति से आज बुलाता हूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्ली महाबीजाक्षरसम्पन्न! श्रीवृषभजिनेन्द्रदेव! मम हृदये अवतर अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वननम्।

ॐ ह्रीं श्रीं क्ली महाबीजाक्षरसम्पन्न! श्रीवृषभजिनेन्द्रदेव! मम हृदये अवतर अवतर तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीं क्ली महाबीजाक्षरसम्पन्न! श्रीवृषभजिनेन्द्रदेव! मम हृदये समीपे सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जन्मों जन्मों से हे स्वामिन, मृत्यु से डरता आया हूँ।
मृत्यु का कारण जन्म नाथ, इतना मैं समझ न पाया हूँ।।
क्षय करने जन्म, जरा, मृत्यु, प्रासुक जल अर्पित करता हूँ।
भक्तामर सम भक्ति करके, भव-भव की जड़ता हरता हूँ।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय जलम् निर्वपामीति स्वाहा।

मैं निज स्वभाव से शीतल हूँ, पावन हूँ, निर्मल, उज्ज्वल हूँ।
रागादि विभावों के कारण, भव-भव से भव दावानल हूँ।।
भवताप मिटाने को स्वामिन्, शुभ चंदन अर्पित करता हूँ।
भक्तामर सम भक्ति करके, भव-भव की जड़ता हरता हूँ।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय चन्दनम् निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय होकर भी हे स्वामिन्! अक्षयपद को ललचाया हूँ।
हूँ मालिक किंतु भिखारी सा, नित अभिनय करता आया हूँ।।

अक्षय शुद्धातम पद पाने, शुभ अक्षत अर्पित करता हूँ।
भक्तामर सम भक्ति करके, भव-भव की जड़ता हरता हूँ।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

इच्छा के गहन समुन्दर में, खारा जल, पीता आया हूँ।
निष्काम स्वभावी पुष्पों का, नहिं मैं पराग चख पाया हूँ।।
हो काम भावना शांत प्रभो शुभ पुष्प समर्पित करता हूँ।
भक्तामर सम भक्ति करके, भव-भव की जड़ता हरता हूँ।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय पुष्पम् निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ! क्षुधा की तृप्ति हो, व्यंजन का मंजन कर डाला।
नहिं भक्ष्य, अभक्ष्य गिना कुछ भी, निज ज्ञान विभंजन कर डाला।।
भव क्षुधा विनाशन हेतु प्रभो, नैवेद्य समर्पित करता हूँ।।
भक्तामर सम भक्ति करके, भव-भव की जड़ता हरता हूँ।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

अज्ञान निशा का अँधियारा, निर्मोही को डसता आया।
मोही-मोही कहलाकर भी, न शर्माया, हँसता आया।।
मोहान्धकार के नाश हेतु, शुभ दीप समर्पित करता हूँ।
भक्तामर सम भक्ति करके, भव-भव की जड़ता हरता हूँ।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय दीपम् निर्वपामीति स्वाहा।

जब शुभ कर्मों का उदय हुआ, अच्छा माना मैं इठलाया।
जब अशुभ कर्म का हुआ उदय, संतापित हो अति पछताया।।
अब अष्ट कर्म दहकाने को, शुभ धूप समर्पित करता हूँ।
भक्तामर सम भक्ति करके, भव-भव की जड़ता हरता हूँ।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय धूपम् निर्वपामीति स्वाहा।

संसार फलों की चाहत में, शिवफल को कभी नहीं चाहा।
मैं शिव स्वरूपमय होकर भी, शिव का करता आया स्वाहा।।
अब मोक्षमहाफल प्राप्ति हेतु, सम्यक् फल अर्पित करता हूँ।
भक्तामर सम भक्ति करके, भव–भव की जड़ता हरता हूँ।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय फलम् निर्वपामीति स्वाहा।

हे शांति सौख्य शिवदाता प्रभु, अतिशय शुभ भावों से आया।
हो अष्टम् वसुधा प्राप्त मुझे, मानस अति निर्मल कर लाया।।
हे प्रभु अनर्घ्य पद मिल जाये, शुभ अर्घ्य समर्पित करता हूँ।।
भक्तामर सम भक्ति करके भव–भव की जड़ता हरता हूँ।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा–

भक्तामर जयमालिका, गाता हूँ धरि ध्यान।
इह–परभव मंगल करें, आदिनाथ भगवान।।

(चौपाई)

जय–जय आदिनाथ जिन स्वामी, गुणधारी हे अन्तर्यामी।
भक्त अमर नित तुमको ध्याते, हम चरणों में शीष झुकाते।।
कौशल नगरी जनम लिया है, माँ मरुदेवी धन्य किया है।
नाभिराय पितु अति हर्षाये, नगरी में अति उत्सव छाये।।
सुरपति तांडव नृत्य रचाता, भक्ति भाव से तव गुण गाता।
रोग शोक सारी बाधायें, मिट जातीं जन–जन हर्षायें।।
असि–मसि षट् उपदेश सुनाया, जनता का दुःख, क्लेश हटाया।
प्रथम आपने दीक्षा धारी, चकित हुये सारे नर नारी।।
जब अक्षय तृतीया तिथि आई, प्रथम आपने भिक्षा पाई।
अनुपम शुक्ल ध्यान लगाया, प्रभु जी केवलज्ञान उपाया।।

द्वादश सभा लगी मनहारी, मोक्षमार्ग प्रगटा हितकारी।
धर्म प्रवर्तक आप कहाये, तीनलोक चरणों सिर नाये।।
नाथ! आप मुक्तिपद पाया, देव पंचकल्याण मनाया।
भक्तामर बन हम गुण गायें, निज आतम कल्याण मनायें।।

दोहा-

मानतुंग आचार्य सम, करें आपका ध्यान ।
है 'विमर्श' पल पल यही, पाऊँ मोक्ष महान।।

ॐ ह्रीं परमशान्तिविधायकाय हृदयस्थिताय श्रीवृषभजिनचरणाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

सर्व विघ्न-विनाशक

भक्तामर – प्रणत – मौलि – मणि – प्रभाणा–
मुद्योतकं दलित – पाप – तमो वितानम् ।
सम्यक् प्रणम्य जिन – पाद – युगं युगादा–
वालम्बनं भव जले पततां जनानाम् ।।1।।

अन्वयार्थ

(भक्त) भक्तिमान **(अमर)** देवों के **(प्रणतमौलि)** नम्रीभूत मुकुटों के **(मणि–प्रभाणाम्)** मणियों के प्रभा के **(उद्योतकं)** प्रकाशक **(पापतम:)** पापरूपी अंधकार के **(वितानम्)** विस्तार को **(दलित)** नाशक **(युगादौ)** युग के आदि में **(भव जले)** संसार रूपी जल में, समुद्र में **(पतताम्)** गिरते हुये **(जनानाम्)** जीवों के (मनुष्यों के) **(आलम्बनं)** आश्रय **(जिनपाद युगं)** जिनेन्द्र भगवान के द्वय चरणों को **(सम्यक्)** समीचीन, मन–वचन–काय से **(प्रणम्य)** प्रणाम करके (स्तुति करता हूँ)

भावार्थ – युग के आदि में दुखी एवं संसार समुद्र में गिरते हुये जीवों के लिये षट्कर्मोपदेश एवं धर्म का उपदेश देकर पाप के प्रसार को रोका, अत: भक्तिमान देवों ने उनके चरण कमल में भली भाँति नमस्कार किया, जिससे चरण नख की कांति से देवों के मुकुट मणि अतिशय प्रभामय हो चमकने लगे। ऐसे संसार समुद्र में आलंबन रूप जिनेन्द्र के युगल चरणों की मैं वन्दना कर स्तुति करता हूँ।

जाप– ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं।

(ऐसे ऋद्धिधारी मुनिराज जिन्हें जिन संज्ञा प्राप्त है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

आदिनाथ स्तोत्र महान, जो नर गाये रे ।
घाति–अघाति हो–हो–2 सब कर्म नशाये रे ।।
आदिनाथ प्रभु गुणस्तवन, जो नरगाये रे।
जीवन में उसके हो–हो–2 दुख न रह पाये रे।।
भक्तामर नत मुकुट मणि–झिलमिल होती लड़ी–लड़ी।
ज्ञान–ज्योति प्रगटी टूटे–पापकर्म की कड़ी–कड़ी।।
भवसागर में गिरते जन, कर्मभूमि का प्रथम चरण।
आदिनाथ प्रभुवर जिनके, चरण–युगल हैं आलम्बन।।
सम्यक् वन्दन कर मनवा हर्षाये रे ।।1।।

अर्घ्य– ॐ ह्रीं विश्वविघ्नहराय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व विघ्न-विनाशक

यः संस्तुतः सकल – वाङ्मय–तत्त्व–बोधा–
दुद्भूत – बुद्धि–पटुभिः – सुर – लोक – नाथैः ।
स्तोत्रे – र्जगत् – त्रिय – चित – हरैरुदारैः
स्तोष्ये किलाह–मपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ।।2।।

अन्वयार्थ

(सकल वाङ्मय) समस्त द्वादशाग के **(तत्त्वबोधात्)** तत्त्व ज्ञान से **(उद्भूत)** उत्पन्न हुई, **(बुद्धि पटुभिः)** बुद्धि के चातुर्य से **(सुरलोकनाथैः)** इन्द्रों के द्वारा **(जगत्–त्रितय)** तीनों लोकों के **(चित्त हरैः)** प्राणियों के चित्त को हरण करने वाले **(उदारैः)** प्रशंसनीय **(स्तोत्रैः)** स्तोत्रों के द्वारा **(यः)** जो **(संस्तुतः)** संस्तुत किये गये **(तम्)** उन **(प्रथमं जिनेन्द्रम्)** प्रथम (आदिनाथ) जिनेन्द्र को/की **(किल)** निश्चय से **(अहम्)** मैं **(अपि)** भी **(स्तोष्ये)** स्तुति करूँगा।

भावार्थ – द्वादशांग के यथार्थ ज्ञान से जन्मी बुद्धि चातुर्य ऐसे बृहस्पति द्वारा जिन मनमोहक स्तोत्रों से प्रथम जिनेन्द्र आदिनाथ भगवान की स्तुति की गई, मैं भी निश्चय से उन आदि प्रभु की स्तुति करूँगा।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहि जिणाणं।
(ऐसे ऋद्धिधारी मुनिराज जिन्हें अवधिज्ञान प्राप्त है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

द्वादशांग का जो ज्ञाता, तत्त्वज्ञान पटु कहलाता।
मनमोहक स्तुतियों से, सुरपति प्रभु के गुण गाता।।
त्रिभुवन चित्त लुभाऊँगा, मैं भी प्रभु गुण गाऊँगा।
आदिनाथ तीर्थेश प्रथम, निश्चय उनको ध्याऊँगा।।
प्रभु की भक्ति ही, संकल्प जगाये रे ।।2।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं नानामरसंस्तुताय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व सिद्धि-दायक

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चित पाद – पीठ !
स्तोतुं समुद्यत – मति – र्विगत–त्रपोऽहम् ।
बालं विहाय जल – संस्थित – मिन्दु बिम्ब–
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ।।3।।

अन्वयार्थ

(विबुधार्चित) देवों के द्वारा अर्चित (पूजित) **(पाठपीठ)** पैरों के रखने की आसन (जिनकी ऐसे हे जिनेश) **(विगतत्रपः)** लज्जा रहित होकर **(अहम्)** मैं **(बुद्ध्या विना)** बुद्धि के बिना **(अपि)** भी **(स्तोतुम्)** स्तुति करने के लिए **(समुद्यतमतिः)** तत्पर बुद्धि वाला (हो रहा हूँ) **(यतः)** क्योंकि **(बालं विहाय)** बालक को छोड़कर **(अन्यः)** दूसरा **(कः)** कौन **(जनः)** मनुष्य **(जलसंस्थितम्)** जल में स्थित **(इन्दुबिम्बम्)** चन्द्रमा के प्रतिबिम्ब को **(सहसा)** शीघ्रता से, बिना विचारे **(ग्रहीतुम्)** पकड़ने की **(इच्छति)** इच्छा करता है, अर्थात् कोई इच्छा नहीं करता।

भावार्थ – हे जिनेश! आपकी पादपीठ, चरण रखने की आसन सुरलोक के वासी देवेन्द्रों के द्वारा अर्चित है, पूजित है। मैं बुद्धि से हीन समग्र लज्जा को छोड़कर आपकी भक्ति, स्तुति करने को तत्पर बुद्धि वाला हो रहा हूँ मेरी यह चेष्टा वैसे ही है, जैसे कोई बालक जल में स्थित चन्द्रमा के बिम्ब को शीघ्रता से पकड़ने का प्रयास करता है अन्य कोई नहीं।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहि–जिणाणं।
(ऐसे ऋद्धिधारी मुनिराज जिन्हें परमावधि ज्ञान प्राप्त है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

❊ पद्यानुवाद ❊

देव–सुरों से है पूजित, पादपीठ जो अतिशोभित ।
तज लज्जा स्तुति गाने, तत्पर हूँ मैं बुद्धि रहित ।।
चन्द्रबिम्ब जल में जैसे, अभी पकड़ता हूँ वैसे ।
बालक ही सोचा करता, विज्ञ मनुज सोचे कैसे ।।
बालक हूँ फिर भी, मन तो उमगाये रे ।।3।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं मत्यादिसुज्ञानप्रकाशनाय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल जन्तु भय मोचक

वक्तुं गुणान् गुण – समुद्र ! शशांक कान्तान्,
कस्ते क्षमः सुर – गुरु – प्रतिमोऽपि बुद्ध्या ।
कल्पान्त – काल – पवनोद्धत – नक्र – चक्रं,
को वा तरीतु–मल–मम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ।।4।।

अन्वयार्थ

(गुण समुद्र) हे गुणों के सागर **(ते)** आपके **(शशाङ्क कान्तान्)** चन्द्र कान्ति के समान उज्ज्वल **(गुणान्)** गुणों को **(वक्तुम्)** कहने के लिए **(बुद्ध्या)** बुद्धि के द्वारा **(सुरगुरु)** बृहस्पति के **(प्रतिम)** समान **(अपि)** भी **(कः)** कौन मनुष्य **(क्षमः)** समर्थ है, अर्थात् कोई नहीं **(वा)** अथवा **(कल्पान्तकाल)** प्रलय काल की **(पवनोद्धत)** प्रचण्ड वायु से उछलते हुए कुपित **(नक्रचक्रम्)** मगरमच्छ आदि जलचरों का समुह युक्त **(अम्बुनिधिं)** समुद्र को **(भुजाभ्याम्)** दोनों भुजाओं के द्वारा **(तरीतुम्)** तैरने के लिए **(कः)** कौन मनुष्य **(अलम्)** समर्थ है, अर्थात् कोई भी नहीं।

भावार्थ – हे गुणवारिधे! आपके चन्द्रकांति के समान उज्ज्वल अनंत गुणों का वर्णन करने में जब वृहस्पति जैसा सुरगुरु भी असमर्थ है, तब फिर कौन है जो आपके सम्पूर्ण गुणों का वर्णन कर सके? अर्थात् कोई नहीं। प्रलयकाल के पवन से उद्वेलित समुद्र जिसमें भयंकर मगरमच्छ कुपित हों, उसे अपनी दोनों भुजाओं से पार करने में कौन मनुष्य समर्थ है, अर्थात् कोई भी नहीं।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहि जिणाणं।
(ऐसे ऋद्धिधारी मुनिराज जो सर्वावधिज्ञान के धारी हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

चन्द्रकान्ति सम गुण उज्ज्वल, कहने सुरपति में ना बल।
हे गुणसागर! कौन पुरुष, कहने को हो सके सबल।।
प्रलयकाल की वायु प्रचण्ड–नक्र–चक्र हों अति उद्दण्ड।
ऐसा सिंधु भुजाओं से, पार करेगा कौन घमण्ड।
प्रभु तेरी भक्ति, नौका बन जाये रे ।।4।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं नानादुःखसमुद्रतारणाय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेत्र रोग संहारक

सोऽहं तथापि तव भक्ति – वशान्मुनीश !
कर्त्तुं स्तवं विगत–शक्ति – रपि प्रवृत्त: ।
प्रीत्यात्म – वीर्य–मविचार्य मृगी मृगेन्द्रम्,
नाभ्येति किं निज–शिशो:–परि–पालनार्थम् ।।5।।

अन्वयार्थ

(मुनीश) हे मुनीश्वर **(स:)** वह (असमर्थ, अशक्त) **(अहम्)** मैं (मानतुंग) **(तथापि)** फिर भी **(भक्तिवशात्)** भक्ति के वश से **(विगत शक्ति: अपि)** शक्तिहीन होते हुए भी **(तव)** आपकी **(स्तवं)** स्तुति को **(कर्तुं)** करने के लिए **(प्रवृत्त:)** तैयार हुआ हूँ **(मृगी)** हिरणी **(आत्मवीर्यम्)** अपनी शक्ति को **(अविचार्य)** विचार न कर **(प्रीत्यात्म)** प्रीति से **(निजशिशो:)** अपने शिशु की **(परिपालनार्थं)** रक्षा करने के लिए **(किम्)** क्या **(मृगेन्द्रम्)** सिंह के सामने **(न अभ्येति)** नहीं जाती ? अर्थात् अवश्य जाती है।

भावार्थ – हे मुनीश्वर! जिसप्रकार शक्तिहीन हिरणी प्रीतिवश अपने शिशु की रक्षा करने के लिये अपनी शक्ति का ख्याल न कर सिंह का भी सामना करने लग जाती है, उसीप्रकार मैं भी शक्तिहीन होने पर भी भक्तिवशात् आपकी स्तुति करने के लिये उद्यत हो रहा हूँ।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहि–जिणाणं।
(ऐसे ऋद्धिधारी मुनिराज जिन्हें असंख्यात योजन की बात स्पष्ट हो जाती है उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

भक्ति भाव उर लाया हूँ, स्तुति करने आया हूँ।
शक्ति नहीं मुझमें फिर भी, शक्ति दिखाने आया हूँ।।
हिरणी वन को जाती है, सिंह सामने पाती है।
निज शिशु रक्षा हेतु मृगी, आगे लड़ने आती है।।
प्रीतिवश हिरणी, कर्त्तव्य निभाये रे।।5।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं सकलकार्य–सिद्धिकराय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस्वती विद्या प्रसारक

अल्पश्रुतं – श्रुतवतां परिहास – धाम,
त्वद्–भक्तिरेव मुखरी–कुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र–चारु–कलिका–निकरैक–हेतुः ।।6।।

अन्वयार्थ

(अल्पश्रुतम्) अल्पज्ञानी **(श्रुतवताम्)** विद्वानों की **(परिहास धाम)** हँसी का पात्र **(माम्)** मुझको **(त्वद्भक्तिः)** आपकी भक्ति **(एव)** ही **(बलात्)** जबरन **(मुखरी कुरुते)** मुखर (वाचाल) कर रही है **(किल)** निश्चय से **(यत्)** जो **(कोकिलः)** कोयल **(मधौ)** वसन्त ऋतु में **(मधुरं)** मधुर, मीठा, सुरीला **(विरौति)** बोलती है **(तत्)** वह **(आम्र)** आम की **(चारुकलिका)** सुन्दर मंजरी का **(निकरैक हेतुः)** समूह ही एक मात्र कारण है।

भावार्थ – हे प्रभो! मैं अल्पज्ञ हूँ, शास्त्रों का विशेष जानकार नहीं हूँ, अतएव विद्वानों के द्वारा हँसी का पात्र हूँ। आपका स्तुति गान करने के लिये एकमात्र आपकी भक्ति ही मुझे वाचाल कर रही है, जैसे बसंत ऋतु में कोयल को कूकने के लिये आम्र की सुन्दर मंजरी ही एकमात्र कारण होती है।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठ बुद्धीणं।
(ऐसे ऋषि जिनकी बुद्धि कोष्ठ के समान हो, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

मैं अल्पज्ञ हूँ अकिंचन, हँसी करें प्रभु विद्वत्जन।
करती है वाचाल मुझे, भक्ति आपकी हे स्वामिन्।।
जब बसंत ऋतु आती है, कोयल कुहु–कुहु गाती है।
सुन्दर आम्र मंजरी ही, तब कारण बन जाती है।।
प्रभु तेरी मूरत, मेरे मन भाये रे।।6।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं याचितार्थ प्रतिपादन शक्तिसहिताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व क्षुद्रोपद्रव निवारक

त्वसंस्तवेन भव – संतति – सन्निबद्धं,
पापं क्षणात्–क्षय मुपैति शरीरभाजाम् ।
आक्रान्त–लोकमलि–नील–मशेष–माशु,
सूर्यान्शु–भिन्न–भिव शार्वर–मंधकारम् ।।7।।

अन्वयार्थ

(त्वत्संस्तवेन) आपके स्तवन से **(शरीरभाजाम्)** देहधारी जीवों के **(भवसन्तति)** अनेक भवों की परम्परा से **(सन्निबद्धम्)** अच्छी तरह बँधे हुए **(पापं)** पापकर्म **(क्षणात्क्षयं)** क्षणभर में क्षय को **(उपैति)** प्राप्त होते हैं **(सूर्यान्शुभिन्नम्)** सूर्य की किरणों से छिन्न भिन्न **(आक्रान्तलोकम्)** लोकभर में फैले हुए **(अलिनीलम्)** भ्रमर के समान काले **(शार्वरम्)** रात्रि के **(अशेषं)** समस्त **(अन्धकारम् इव)** अन्धकार के समान **(आशु)** शीघ्र ही।

भावार्थ – जिसप्रकार लोकभर में व्याप्त रात्रि का सघनतम् अंधकार सूर्य की किरणों से क्षणभर में शीघ्रता से नष्ट हो जाता है, उसीप्रकार हे जिनेन्द्र! आपके स्तवन से समस्त देहधारी जीवों के पापकर्म जो अनेक भवों से संचित परम्परा वाले हैं, क्षणभर में शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीज – बुद्धीणं ।
(ऐसे ऋद्धिधारी मुनि जिनकी बुद्धि बीज के समान महान् है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

नाथ! आपके संस्तव से, भवि जीवों के भव–भव से।
बँधे हुये जो पापकर्म – क्षणभर में क्षय हों सबके।।
भँवरे जैसा तम काला, जग को अँधा कर डाला।
ऐसा तम रवि किरणों ने – आकर तुरत मिटा डाला।।
प्रभु तेरी भक्ति, अघकर्म मिटाये रे।।7।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं सकलपापफलकुष्टनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वारिष्ट योग-निवारक

मत्त्वेति नाथ ! तव संस्तवनं मयेद-
मारभ्यते तनु - धियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी - दलेषु,
मुक्ता-फल द्युति-मुपैति ननूद-बिन्दुः ।।8।।

अन्वयार्थ

(नाथ) हे स्वामिन्! **(इति मत्वा)** ऐसा मानकर **(तनुधिया अपि)** मन्द बुद्धि वाला होने पर भी **(मया)** मेरे द्वारा **(इदं)** यह **(तव संस्तवनं)** आपका संस्तवन **(आरभ्यते)** प्रारंभ किया जा रहा है, जो **(तव प्रभावात्)** आपके प्रभाव से **(सतां)** सज्जन पुरुषों के **(चेतः हरिष्यति)** चित्त को उसीप्रकार हरण करेगा, जिसप्रकार **(ननु)** निश्चय से **(उद बिन्दुः)** जल की बूँद **(नलिनी दलेषु)** कमलिनी के पत्तों पर **(मुक्ताफलद्युतिम्)** मोती की कांति को **(उपैति)** प्राप्त होती है।

भावार्थ - हे स्वामिन! जिसप्रकार कमलिनी के पत्ते की कांति से जल की बूँद भी मुक्ता की कांति को प्राप्त हुई सी लगती है उसीप्रकार मुझ अल्पबुद्धि के द्वारा किया हुआ आपका स्तवन सज्जन पुरुषों के चित्त को हरण करेगा, इसमें भी एकमात्र आपका ही प्रभाव है।

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं णमो पादाणु - सारीणं।
(ऐसे ऋषि जिन्हें एक पद पढ़कर द्वादशांग का ज्ञान हो जाता है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

अल्पज्ञान की धारा है, स्तुति को स्वीकारा है।
चित्त हरे सत्पुरुषों का, नाथ! प्रभाव तुम्हारा है।।
नलिनी दल पर बिन्दु जल, लगता जैसे मुक्ताफल।
है प्रभाव नलिनीदल का, कांतिमान कब होता जल।।
नलिनीदल वा जल, अपने में समाये रे।।8।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं अनेकसंकटसंसारदुःखनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम वलय की पूजा का पूर्णार्घ्य

जल–कुसुम–सुगन्धै–रक्षतै–र्दीपधूपै,
र्विविध–फल–निवेद्यै–रर्चयामीह देवम्।
सुर–नरवर– सेव्यं दोहदानां वरेशं,
शिव सुखपद धामं प्राणिनां प्राणनाथम्।।

ॐ ह्रीं अष्टदलकमलाधिपतये श्री वृषभजिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिप्सित फलदायक

आस्तां तव स्तवन–मस्त–समस्त–दोषं,
त्वत्सङ्कथापि जगतां दुरितानि हंति ।
दूरे सहस्र – किरण: कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकास–भाञ्जि ।।9।।

अन्वयार्थ

(तव) आपका **(अस्त–समस्त दोषं)** समस्त दोष रहित/निर्दोष **(स्तवनं)** स्तवन **(दूरे आस्ताम्)** दूर रहे **(त्वत्संकथा)** आपके नाम की पवित्र कथा **(अपि)** भी **(जगताम्)** समस्त संसारी जीवों के **(दुरितानि)** पापों को **(हन्ति)** हनन करती है **(सहस्रकिरण:)** सूर्य **(दूरे)** दूर **(आस्ताम्)** रहे **(तस्य)** उसकी **(प्रभा)** कांति **(एव)** ही **(पद्माकरेषु)** सरोवरों में **(जलजानि)** कमलों को **(विकास भाञ्जि)** विकसित **(कुरुते)** कर देती है।

भावार्थ – हे पवित्र नाम ! समस्त दोष रहित आपका कीर्तन तो दूर की बात है, मात्र आपके नाम की पवित्र कथा ही संसारी जीवों के पापों को समूल नष्ट करने वाली है। जिसप्रकार सूर्यागमन के पूर्व मात्र प्रभापुंज से ही सरोवरों में कमल खिल जाते हैं, फिर सूर्य के आगमन पर तो खिलेंगे ही, इसमें कौनसा आश्चर्य है ? अर्थात् कोई नहीं।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिण्ण – सोदारणं।
(ऐसे ऋषि जो संख्यातयोजन तक के सभी अक्षर–अनक्षर भाषा वाले जीवों का उत्तर दे सकते हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

दूर रहे प्रभु गुण स्तवन, दोष रहित जो अति पावन।
नाथ आपकी नामकथा, पापों का करती खण्डन।।
दिनकर दूर रहा आये, क्षितिज लालिमा छा जाये।
सरोवरों में कमलों को, प्रभा प्रफुल्लित कर जाये।।
शुभ नाम तेरा, होठों पे आये रे।।9।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं सकलमनोवांछितफलदात्रे क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उन्मत्त-कूकर विष निवारक

नात्यद्भुतं भुवन – भूषण ! भूतनाथ !
भूतै–र्गुणै–र्भुवि भवन्त–मभिष्टुवन्तः ।।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्याश्रितं य इह नात्म–समं करोति ।।10।।

अन्वयार्थ

(भुवन भूषण) हे तीन लोक के आभूषण **(भूतनाथ)** हे जगन्नाथ **(भूतैः)** वास्तविक **(गुणैः)** गुणों के द्वारा **(भवन्तम्)** आपको **(अभिष्टुवन्तः)** भजने वाले भव्य पुरुष **(भुवि)** पृथ्वी पर **(भवतः)** आपके **(तुल्या)** सदृश **(भवन्ति)** हो जाते हैं **(इति)** यह बात **(अति)** अधिक **(अदभुतं)** आश्चर्यकारक **(न)** नहीं है **(वा)** अथवा **(ननु)** निश्चय से **(तेन)** उससे (स्वामी, मालिक) **(किम्)** क्या **(प्रयोजनमस्ति)** प्रयोजन है **(यः)** जो **(इह)** इस लोक में **(आश्रितम्)** अपने अधीन सेवक को **(भूत्या)** विभूति से **(आत्मसमं)** अपने समान **(न करोति)** नहीं करता है।

भावार्थ – हे त्रिलोकभूषण! हे जगन्नाथ! वास्तविक गुणों के द्वारा आपकी स्तुति करने वाले भव्य पुरुष आपके तुल्य प्रभुता को प्राप्त कर लेते हैं। इसमें कोई अचरज नहीं है क्योंकि उस स्वामी या मालिक से क्या प्रयोजन जो अपने अधीनस्थ सेवक को अपने समान नहीं कर लेता अर्थात् उसके स्वामी होने से कोई लाभ नहीं ?

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयं – बुद्धाणं।
(ऐसे ऋषि जो स्वयंबुद्ध हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

जगन्नाथ! हे जगभूषण! जो भी प्राणी गाता गुण।
इसमें क्या आश्चर्य प्रभो! होता है तुम सम तत्क्षण।।
लाभ ही क्या उस स्वामी से–वैभवधारी नामी से।
निज सेवक को जो निजसम–करे नहीं अभिमानी से।।
तुझसा स्वामी ही, सेवक को भाये रे।।10।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं अर्हज्जिनस्मरणजिनसम्भूताय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकर्षण बढाने वाला

दृष्ट्वा भवन्त – मनिमेष विलोकनीयं,
नान्यत्र तोष – मुपयाति जनस्य चक्षुः ।
पीत्वा पयः शशिकर–द्युति–दुग्ध–सिन्धोः,
क्षारं जलं जलनिधे–रसितुं क इच्छेत् ।।11।।

अन्वयार्थ

(अनिमेष) अपलक **(विलोकनीयं)** देखने योग्य **(भवन्तम्)** आपको **(दृष्ट्वा)** देख करके **(जनस्य)** मनुष्य की **(चक्षुः)** आँखें **(अन्यत्र)** अन्य कहीं पर **(तोषं)** सन्तोष को **(न उपयाति)** प्राप्त नहीं होती **(शशिकर द्युति)** चन्द्रमा की किरण के समान कान्ति वाले धवल **(दुग्ध सिन्धोः)** क्षीरसागर के **(पयः)** जल को **(पीत्वा)** पीकर **(कः)** कौन (पुरुष) **(जलनिधेः)** (लवण) समुद्र के **(क्षारं)** खारे **(जलम्)** जल को **(रसितुम्)** चखने, पीने के लिए **(इच्छेत्)** इच्छा करेगा अर्थात् कोई नहीं।

भावार्थ – हे परमदर्शनीय! निरन्तर टकटकी लगाकर देखने योग्य आपका लावण्यमयी रूप देखकर जिसने संतोष प्राप्त किया है, वह अन्य किसी देव को देखकर संतुष्ट नहीं होता। जिसप्रकार चन्द्रमा की धवल किरणों के समान शुभ्र क्षीरसागर के जल को जिसने पी लिया है, क्या वह खारे जल को चखने की इच्छा करेगा? अर्थात् कभी नहीं करेगा।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेय – बुद्धाणं।
(ऐसे ऋषि जो प्रत्येक बुद्धि ऋद्धि के धारी हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

❊ पद्यानुवाद ❊

अपलक रूप निहार रहा, दर्शनीय संतोष महा।
तुझसा देव न देवों में, रागद्वेष की खान कहा।।
क्षीरसिन्धु का मीठा जल, सुन्दर शशि सम कांति धवल।
पीकर, क्यों पीना चाहे, लवण सिंधु का खारा जल।।
तुझ बिन प्रभु मुझको, कोई और न भाये रे।।11।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं सकलतुष्टिपुष्टिकराय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वांछित-रूप प्रदायक

यैः शान्त-राग-रुचिभिः परमाणुभिस्त्वं,
निर्मापितस्-त्रि-भुवनैक-ललाम-भूत !
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां,
यत्ते समान-मपरं न हि रूप-मस्ति ।।12।।

अन्वयार्थ

(त्रिभुवनैक) हे तीन लोक में अद्वितीय **(ललामभूत)** अलंकार रूप (भगवन्) **(त्वं)** आप **(यैः)** जिन **(शान्तरागरुचिभिः)** प्रशम भाव की कान्ति वाले **(परमाणुभिः)** परमाणुओं के द्वारा **(निर्मापितः)** निर्मापित किये गये हो **(खलु)** निश्चय से **(ते)** वे **(अणवः)** अणु **(अपि)** भी **(तावन्त)** उतने **(एव)** ही (थे) **(यत्)** क्योंकि **(ते)** आपके **(समानं)** समान **(पृथिव्याम्)** पृथ्वी पर **(अपरं)** कोई दूसरा **(रूपम्)** रूप **(न हि अस्ति)** नहीं है।

भावार्थ – हे तीन लोक के अद्वितीय अलंकार ! जिन शांतराग अर्थात् वीतरागता के सुन्दर परमाणुओं से आपके परमौदारिक शरीर का निर्माण हुआ है, वे इस लोक में निश्चित रूप से उतने ही थे, क्योंकि इस भूमण्डल पर आप जैसा सुन्दर रूप कोई दूसरा दृष्टिगोचर नहीं होता।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहिय – बुद्धाणं।
(ऐसे ऋषि जो बोधि बुद्धि के धारक हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

देख लिये हमने त्रिभुवन, तुझसा सुन्दर न भगवन् ।
प्रशम कांतिमय अणुओं से, रचा गया प्रभु! तेरा तन।।
निश्चित वे अणु थे उतने, नाथ! देह में हैं जितने।
अन्य देव का, प्रभु! तुमसा-रूप कहाँ देखा किसने।।
तेरी छवि मेरे, नयनों में समाये रे ।।12।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं वांछितरूपफलशक्तये क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लक्ष्मी-सुख दायक

वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्र-हारि,
निःशेष-निर्जित-जगत्-त्रितयोपमानम् ।
बिम्बं कलंक-मलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पाण्डु-पलाश-कल्पम् ।।13।।

अन्वयार्थ

(सुर) देव **(नर)** मनुष्य **(उरग)** धरणेन्द्रों के **(नेत्रहारि)** नेत्रों को हरण करने वाला **(निःशेष)** सम्पूर्ण रूप से **(निर्जित)** जीत लिया है **(जगत् त्रितयोपमानम्)** तीनों लोकों के उपमानों को जिसने ऐसा **(ते)** आपका **(वक्त्रम्)** मुखमण्डल **(क्व)** कहाँ? और **(कलङ्क मलिनम्)** कलंक से मलीन **(निशाकरस्य)** चन्द्रमा का **(बिम्बं)** बिम्ब **(क्व)** कहाँ? **(यत्)** जो **(वासरे)** दिन में **(पलाश कल्पम्)** ढाक पत्र के समान **(पाण्डु)** पीला **(भवति)** हो जाता है।

भावार्थ – हे नेत्रहारि जिनेन्द्र देव ! कहाँ तो आपका देव, मनुष्य और भवनवासी धरणेन्द्र के नयनों को हरण करने वाला, तीन लोक की उपमाओं को जीतने वाला अद्वितीय सौन्दर्य का धारक मुखमण्डल और कहाँ वह कलंकी चन्द्रमा जो दिन में पलाश के पत्र के समान निस्तेज पड़ जाता है।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो उजु – मदीणं।
(ऐसे ऋषि जिन्हें ऋजुमती मनःपर्यय ज्ञान है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

विजित अखिल उपमाधारी, सुरनर उरग नेत्रहारी।
कहाँ आपका मुखमण्डल-शोभा जिसकी अति प्यारी।।
कहाँ कलंकी वह राकेश, निष्प्रभ हो जब आये दिनेश।
ढाक पुष्प सम पाता क्लेश, न खुशबू न कांति विशेष।।
मनहर मुख की छवि, कभी दूर न जाये रे।।13।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं लक्ष्मीसुखविधायकाय क्लीं महाबीजाक्षर – सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आधि-व्याधि नाशक

सम्पूर्ण-मण्डल-शशांक-कला-कलाप
शुभ्रा गुणास्-त्रिभुवनं तव लंघयन्ति ।
ये संश्रितास्-त्रि-जगदीश्वर-नाथमेकं,
कस्तान्-निवारयति संचरतो यथेष्टम् ।।14।।

अन्वयार्थ

(त्रिजगदीश्वर) हे तीनों जगत् के ईश्वर **(सम्पूर्ण मण्डल शशांक)** पूर्णमासी के चन्द्रमण्डल की **(कला-कलाप)** कलाओं के सदृश **(शुभ्राः)** उज्ज्वल **(तव गुणाः)** आपके गुण **(त्रिभुवनम्)** तीनों लोकों को **(लङ्घयन्ति)** उल्लंघन करते हैं **(ये)** जो **(एकम्)** एक मात्र **(नाथम्)** त्रिभुवन के स्वामी को **(संश्रिताः)** आश्रय करके रहने वाले हैं **(तान्)** उनको **(यथेष्टम्)** अपनी इच्छानुसार **(संचरतः)** विचरण करने से **(कः)** कौन (पुरुष) **(निवारयति)** रोक सकता है अर्थात् कोई भी नहीं

भावार्थ – **हे त्रिलोकीनाथ ! आपके उज्ज्वल गुण पूर्णमासी के चन्द्रमण्डल की कलाओं सदृश धवल हैं। आपके उज्ज्वल गुण तीनों लोकों में व्याप्त हो रहे हैं। ठीक ही है, आप जैसे विश्व के एकमात्र अधिष्ठाता प्रभु का आश्रय पाने वालों को स्वेच्छानुसार विचरण करने से रोकने के लिए कौन समर्थ है ? अर्थात् कोई नहीं।**

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउल मदीणं।
(ऐसे ऋद्धिधारी मुनिराज जिन्हें विपुलमति मनःपर्यय ज्ञान है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

शुभ्र कलाओं से शोभित-पूनम का शशि मन मोहित।
नाथ! आपके उज्ज्वल गुण-करें लोकत्रय उल्लंघित।।
नाथ! आप जिसके आधार, विचरें वे इच्छा अनुसार।
तीन लोक में रोक सकें-है किसको इतना अधिकार।।
प्रभु तेरी शरणा, भवपार लगाये रे।।14।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं भूतप्रेतादि भय निवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्मान सौभाग्य संवर्द्धक

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभिर्–
नीतं मनागपि मनो न विकार – मार्गम् ।
कल्पान्त–काल–मरुता चलिता चलेन,
किं मन्दराद्रि–शिखरं चलितं कदाचित् ।।15।।

अन्वयार्थ

(यदि) अगर/यदि **(ते)** आपका **(मनः)** मन **(त्रिदशाङ्गनाभिः)** देवलोक की अप्सराओं के द्वारा **(मनाक् अपि)** जरा सा भी **(विकारमार्गम्)** विकार मार्ग की ओर **(न नीतम्)** नहीं प्राप्त हुआ **(अत्र किम् चित्रम्)** तो इसमें आश्चर्य ही क्या? **(चलिताचलेन)** पर्वतों को चलायमान कर देने वाली **(कल्पांतकाल)** प्रलयकाल की **(मरुता)** वायु द्वारा **(किम्)** क्या **(मंदराद्रि शिखरम्)** सुमेरु पर्वत की चोटी **(कदाचित्)** कभी भी **(चलितम्)** चलायमान की गई है अर्थात् कभी नहीं।

भावार्थ – हे निर्विकारी ! क्या कभी प्रलयकाल की प्रचण्ड वायु के द्वारा सुमेरु पर्वत के शिखर को जरा सा भी चलायमान किया जा सका? अर्थात् नहीं किया जा सका। उसीप्रकार देवांगनाओं के द्वारा आपका मन जरा सा भी विकार मार्ग की ओर नहीं ले जाया जा सका। आप तो अद्वितीय इन्द्रियजेता हो।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो दस पुव्वीणं।
(ऐसे ऋद्धिधारी मुनि जिन्हें अभिन्न दस पूर्व का ज्ञान है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

स्वर्ग अप्सरायें आईं, नृत्यगान कर शर्माईं।
क्या आश्चर्य तनिक में–गर विकार न कर पाईं।।
प्रलय काल की वायु चले, पर्वत, भू से आन मिले।
किन्तु सुमेरु शिखर भी क्या–प्रलय वायु से कभी हिले।।
प्रभु तेरे मन का, कोई पार न पाये रे।।15।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं मेरुवन्मनोबलकरणाय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व विजय दायक

निर्धूम–वर्ति–रपवर्जित–तैल–पूरः,
कृत्स्नं जगत्–त्रयमिदं प्रकटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां,
दीपोऽपरस्त्व–मसि नाथ! जगत्प्रकाशः।।16।।

अन्वयार्थ

(त्वम्) आप **(निर्धूमवर्तिः)** धुँआ और वर्तिका से रहित **(अपवर्जित–तैल–पूरः)** लवालब तेल के पूर से रहित **(कृत्स्नम्)** समस्त **(इदं)** यह **(जगत्त्रयम्)** तीनों लोकों को **(प्रकटी करोषि)** प्रकाशित करते हो, तथा **(चलिताचलानाम्)** पर्वतों को चलायमान करने वाली **(मरुताम्)** हवाओं के द्वारा **(जातु)** कभी भी **(न गम्यः)** प्रभावित होने योग्य नहीं हो **(जगत्प्रकाशः)** अतः आप जगत प्रकाशक **(अपर)** अपूर्व **(दीपः)** दीपक **(असि)** हो।

भावार्थ – हे जग प्रकाशक ! हे परमज्योति ! आप ऐसे कैवल्य ज्ञान रूप परम अपूर्व दीपक हो, जो धुआँ और वाती से रहित, तेल से रहित, हवाओं के द्वारा प्रभावित न किया जाने वाला, तीनों लोक को प्रकाशित करने वाला है।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो चउदस – पुव्वीणं।
(ऐसे ऋद्धिधारी मुनि जिन्हें चौदह पूर्व का ज्ञान है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

जिसमें धूम न बाती हो, तेल न जिसका साथी हो।
हे अखंड! हे अविनाशी! तीनों लोक प्रकाशी हो।।
प्रलयकाल की वायु चले, मणिज्योति कब हिले–डुले।
जगत्प्रकाशी दीप अपूर्व–ज्ञान ज्योति भी नित्य जले।।
प्रभु तेरी ज्योति, मेरा दीप जलाये रे।।16।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं त्रैलोक्यलोकवशंकराय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व रोग निरोधक

नास्तं कदाचि–दुपयासि न राहु गम्यः,
स्पष्टी–करोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नाम्भोधरोदर–निरुद्ध–महा–प्रभावः,
सूर्यातिशायि–महिमासि मुनीन्द्र! लोके ।।17।।

अन्वयार्थ

(मुनीन्द्र) हे मुनीश्वर **(त्वम्)** आप **(कदाचित्)** कभी भी **(न अस्तम्)** अस्त को नहीं **(उपयासि)** प्राप्त होते हो **(न)** न **(राहुगम्यः)** राहु के द्वारा ग्रसने योग्य हो **(न अभ्भोधरोदर)** न मेघों के द्वारा आपका **(निरुद्धमहाप्रभावः)** महाप्रताप छिपता है, तथा **(युगपत्)** एक साथ **(जगन्ति)** तीनों लोकों को **(सहसा)** शीघ्रता से **(स्पष्टी करोषि)** प्रकाशित करते हो **(इति)** इसतरह आप **(लोके)** इस लोक में **(सूर्यातिशायि)** सूर्य से अधिक **(महिमा असि)** महिमा वाले हो।

भावार्थ – **हे मुनीन्द्र ! आप सूर्य से भी अधिक महिमावन्त हो, क्योंकि न आप राहु के द्वारा ग्रसे जाते हो, न आप अस्त को प्राप्त होते हो, न आप बादलों के द्वारा ढके जाते हो। आप तो तीनों लोकों को प्रकाशित करने वाले अद्वितीय आदित्य हो ?**

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठंग – महाणिमित्त – कुसलाणं।
(ऐसे ऋद्धिधारी मुनि जिन्हें आठ निमित्तों का श्रेष्ठ ज्ञान है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

नाथ! आपकी वो महिमा, सूरज की न कुछ गरिमा।
युगपत् लोक प्रकाशी हो, रवि रहता सहमा–सहमा।।
आप सूर्य सम अस्त नहीं, राहु द्वारा ग्रस्त नहीं।
मेघ तेज को छिपा सकें, ऐसा बन्दोबस्त नहीं।।
प्रभु तेरी भक्ति, मिथ्यात्व नशाये रे।।17।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं पापान्धकारनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शत्रु-सैन्य स्तम्भक

नित्योदयं दलित-मोह-महान्धकारं,
गम्यं न राहु-वदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्ज-मनल्प-कांति,
विद्योतयज्-जगदपूर्व-शशांक बिम्बम् ।।18।।

अन्वयार्थ

(तव) आपका **(मुखाब्जम्)** मुख कमल **(नित्योदयम्)** सदा उचित रहने वाला है **(दलित)** नष्ट कर दिया है **(मोह)** मोहरूपी **(महान्धकारम्)** महान अन्धकार को जिसने ऐसा **(अनल्पकान्ति)** अत्यन्त कान्तिवान् **(न)** नहीं **(राहुवदनस्य)** राहु के मुख के द्वारा **(गम्यम्)** समर्थ है/नहीं ग्रसा जाता **(न वारिदानाम्)** न मेघों के **(गम्यं)** गम्य है **(जगत्)** विश्व को **(विद्योतयत्)** प्रकाशित करता हुआ **(अपूर्व शशांक बिम्बम्)** अद्वितीय चन्द्र के बिम्ब के समान **(विभ्राजते)** सुशोभित होता है।

भावार्थ – हे ज्योतिर्मय देव ! आपका मुखमण्डल एक विलक्षण चन्द्रमा है, जो हमेशा उदित, मोहान्धकार का नाशक, राहु के द्वारा अगम्य, बादलों को तिरस्कृत करने वाला, तीनों लोकों को प्रकाशित करने वाला अद्वितीय चन्द्र बिम्ब के समान सुशोभित होता है।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वइड्ढि – पत्ताणं।
(ऐसे ऋषि जो विक्रिया ऋद्धिधारी हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

❊ पद्यानुवाद ❊

राहू कभी नहीं ग्रसता, कृष्ण मेघ से न दबता।
सदा उदित रहने वाला, मोह महातम को दलता।।
अहा! मुखकमल अतिअभिराम, अद्वितीय शशिबिम्ब ललाम।
लोकालोक प्रकाशी है – ज्ञान आपका हे गुणधाम।।
स्तुति प्रभु तेरी, सम्यक्त्व जगाये रे।।18।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं चन्द्रवत्सर्वलोकोद्योतनकराय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उच्चाटनादि रोधक

किं शर्वरीषु शशिनान्हि विवस्वता वा–?
युष्मन्मुखेन्दु–दलितेषु तमस्सु नाथ!
निष्पन्न–शालि–वन–शालिनी जीव–लोके,
कार्यं कियज्–जलधरै–र्जल–भार–नम्रै: ।।19।।

अन्वयार्थ

(नाथ) हे स्वामिन्! **(तमस्सु)** समस्त अंधकार **(युष्मन्मुखेन्दु)** आपके मुख चन्द्र द्वारा **(दलितेषु)** नष्ट हो जाने पर **(शर्वरीषु)** रात्रि में **(शशिना)** चन्द्रमा से **(वा)** और **(अह्नि)** दिन में **(विवस्वता)** सूर्य से **(किम्)** क्या प्रयोजन है? **(जीवलोके)** संसार में **(निष्पन्न)** पके हुए **(शालि वन)** धान्य के खेत **(शालिनि)** शोभाशाली होने पर **(जलभारनम्रै:)** जल के भार से झुके हुए **(जलधरै:)** मेघों से **(कियत् कार्यम्)** कितना कार्य रह जाता है? अर्थात् कुछ नहीं।

भावार्थ – हे स्वामिन्! जिसप्रकार संसार में धान्य के पक जाने पर खेत शोभायमान हो रहे हों, तब जल से भरे बादलों से कोई लाभ नहीं होता उसीप्रकार आपके मुखचन्द्र द्वारा समस्त अंधकार नष्ट हो जाने पर दिन में सूर्य और रात्रि में चन्द्रमा से क्या प्रयोजन? अर्थात् कुछ भी नहीं।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं।
(ऐसे ऋषि जिन्हें विद्याएँ प्राप्त हों, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

मुखशशि का जब दर्श किया, नाथ! तिमिर द्वय नाश दिया।
दिन में रवि से, रजनी में शशि से नाथ! प्रयोजन क्या।।
धान्य पक चुका लगे ललाम, स्वर्णिम खेत हुये अभिराम।
जल को लादे झुके हुये, नाथ ! बादलों का क्या काम।।
प्रभु आप जैसी, हम फसल उगाये रे।।19।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं सकलकालुष्यदोषनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संतान-सम्पत्ति-सौभाग्य-प्रदायक

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं,
नैवं तथा हरि-हरादिषु नायकेषु ।
तेजो महा-मणिषु याति यथा महत्त्वं,
नैवं तु काच-शकले किरणा-कुलेऽपि ।।20।।

अन्वयार्थ

(कृतावकाशम्) पूर्ण रूप से प्रकाश करने वाला **(ज्ञानं)** ज्ञान **(यथा)** जैसे **(त्वयि)** आप में **(विभाति)** सुशोभित होता है **(एवं तथा)** उस तरह **(हरि-हरादिषु)** हरि हर आदि **(नायकेषु)** देवों में **(न)** शोभित नहीं होता **(यथा)** जैसा **(तेजः)** तेज **(महामणिषु)** महामणियों में **(महत्त्वम्)** महत्व को **(याति)** प्राप्त होता है **(तु)** निश्चय से **(किरणाकुलेऽपि)** सूर्य की किरणों से चमकते हुए **(काचशकले)** काँच के टुकड़ों में **(न एवं)** महत्व को प्राप्त नहीं होता। शोभित नहीं होता।

भावार्थ – हे तेजोपुंज ! जैसा सर्वलोकालोक प्रकाशक ज्ञान, आपमें शोभित होता है वैसा हरि, हर आदि देवों में शोभित नहीं होता। क्या जैसा तेज महामणियों में स्फुरायमान होता है, वैसा सूर्य से भी प्रकाशित काँच के टुकड़ों में हो सकता है, अर्थात् नहीं हो सकता।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं।
(ऐसे ऋषि जिन्हें चारण ऋद्धियाँ प्राप्त हों, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

पूर्ण रूप से है विकसित, ज्ञान आप में ही शोभित।
हरि-हरादि देवों में क्या-हो सकता जो नित्य क्षुभित।।
तेज महामणि में जैसा, नाथ! आप में भी वैसा।
सूर्य किरण से जो दमके-काँच शकल में न वैसा।।
केवलज्ञानी ही, अज्ञान नशाये रे ।।20।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं केवलज्ञान – प्रकाशित – लोकालोक – स्वरूपाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व सौभाग्य-प्रदायक

मन्ये वरं हरि-हरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोष-मेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन्-मनोहरति नाथ! भवान्तरेऽपि ।।21।।

अन्वयार्थ

(नाथ) हे स्वामिन्! **(मन्ये)** मैं मानता हूँ **(हरिहरादय)** हरि, हर आदि देव, **(दृष्टा)** हमारे द्वारा देखे गये **(एव वरं)** यह अच्छा ही हुआ क्योंकि **(येषु दुष्टेषु)** जिनके देख लेने पर **(हृदयम्)** हृदय को **(त्वयि)** आप में **(तोषम्)** सन्तोष **(एति)** प्राप्त होता है **(भवता)** आपको **(वीक्षितेन)** देखने से **(किम्)** क्या **(येन)** जिससे कि **(भुवि)** भूमण्डल पर **(अन्यः कश्चित्)** अन्य कोई देव **(भवान्तरे अपि)** जन्म जन्मान्तर में भी **(मनः)** मन को **(न हरति)** हरण नहीं कर सकता।

भावार्थ – हे स्वामिन् ! आपके दर्शन करने से पूर्व मेरे द्वारा हरिहर आदि देवों का देखा जाना श्रेष्ठ ही रहा, क्योंकि उनको देख लेने के बाद मेरा हृदय आप में संतोष को उपलब्ध हुआ है। अब जन्म जन्मान्तर में भी अन्य देवों के देखे जाने पर उनमें मन संतोष को प्राप्त नहीं हो सकता।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्ण – समणाणं।
(ऐसे ऋषि जिन्हें सम्यक् प्रज्ञा प्राप्त हुई है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

❊ पद्यानुवाद ❊

हरि हरादि का भी दर्शन, मान रहा अच्छा भगवन्।
उन्हें देखकर अब तुझमें, हुआ पूर्ण संतोषित मन।।
प्रभु तेरे दर्शन से क्या? साथ चाहता मन तेरा।
इस भूमण्डल पर कोई – देव कभी भी फिर मेरा।।
जन्मों-जन्मों में, न चित्त लुभाये रे।।21।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं सर्वदोषहरशुभदर्शनाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूत-पिशाच बाधा निरोधक

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्र-रश्मिं,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुर-दंशु-जालम् ।।22।।

अन्वयार्थ

(शतानि) सैकड़ों **(स्त्रीणाम्)** स्त्रियाँ **(शतशः)** सैकड़ों **(पुत्रान्)** पुत्रों को **(जनयन्ति)** जन्म देती हैं, परन्तु **(त्वदुपमम्)** आप जैसे **(सुतं)** पुत्र को **(अन्या)** दूसरी **(जननी)** माता **(न प्रसूता)** जन्म नहीं दे सकी **(सर्वादिशः)** सभी दिशाऐं **(दधतिभानि)** ताराओं को धारण करती हैं परन्तु **(स्फुरत्)** दैदीप्यमान **(अंशुजालम)** किरणों के समूह वाले **(सहस्ररश्मिम्)** सूर्य को **(प्राची)** पूर्व **(दिक् एव)** दिशा ही **(जनयति)** उत्पन्न करती है।

भावार्थ – हे अद्वितीय पुत्र! लोक में सैकड़ों स्त्रियाँ, सैकड़ों पुत्रों को जन्म देती हैं, परन्तु आपके समान तेजवन्त पुत्र को अन्य दूसरी माता ने जन्म नहीं दिया। जिसप्रकार समस्त दिशाएँ ताराओं को धारण तो करती हैं, लेकिन दैदीप्यमान सहस्ररश्मि को एकमात्र पूर्व दिशा ही प्रकट करती है।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगास – गामीणं।
(ऐसे ऋषि जिन्हें आकाशगामी ऋद्धि प्राप्त है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

सौ-सौ नारी माँ बनतीं, सौ-सौ पुत्रों को जनतीं ।
नाथ! आप सम तेजस्वी-पुत्र न कोई जन्म सकीं ।।
नभ में अगणित तारागण, सभी दिशा करतीं धारण ।
सूर्य उदित होता जिससे, पूर्व दिशा ही है कारण ।।
माता मरुदेवी, धन्य-धन्य कहाये रे ।।22।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं अद्भुतगुणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिरोरोग नाशक

त्वा–मामनन्ति मुनय: परमं पुमांस–
मादित्य–वर्ण–ममलं तमस: पुरस्तात्।
त्वामेव सम्य–गुपलभ्य जयन्ति मृत्युं,
नान्य:शिव:शिव–पदस्य मुनीन्द्र! पंथा:।।23।।

अन्वयार्थ

(मुनीन्द्र) हे मुनियों के इन्द्र! **(मुनय:)** मुनिजन **(त्वाम्)** आपको **(आदित्य वर्णम्)** सूर्य के समान तेजवन्त **(अमलम्)** निर्मल **(तमस: पुरस्तात्)** अन्धकार से रहित **(परमं पुमांसम्)** लोकोत्तर/श्रेष्ठ पुरुष **(आमनन्ति)** मानते हैं और **(त्वाम् एव)** आपको ही **(सम्यक्)** भली भाँति **(उपलभ्य)** प्राप्त करके **(मृत्युम्)** मरण को **(जयन्ति)** जीतते हैं **(यत्)** क्योंकि **(शिव–पदस्य)** मुक्तिपद को **(अन्य:)** अन्य **(शिव:)** कल्याणकारी **(पन्था:)** मार्ग **(न अस्ति)** नहीं है।

भावार्थ – हे मुनीन्द्र! मुनिजन आपको सूर्य के समान तेजस्वी, दोष रहित, अंधकार से रहित, श्रेष्ठ पुरुष मानते हैं, आपको पाकर मृत्यु पर विजय प्राप्त कर लेते हैं, इसलिये आप मृत्युंजय हैं तथा आपको छोड़कर अन्य कोई कल्याणकारी मार्ग नहीं है। अत: आपको ही मोक्षमार्ग मानते हैं।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसी – विसाणं।
(ऐसे ऋषि जिन्हें आशीविष ऋद्धि प्राप्त है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

सूरज सम तेजस्वी हो, परम पुमान यशस्वी हो।
मुनिजन कहते तमनाशक, निर्मल आप मनस्वी हो।।
नाथ! आपको जो पाते, मृत्युंजयी वो कहलाते।
किन्तु आप बिन शिवपथ का–मार्ग न कोई बतलाते।।
जो तुमको ध्याये, तुम सम बन जाये रे।।23।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं सहस्रनामाधीश्वराय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बुद्धि-वृद्धि प्रदायक

त्वा-मव्ययं विभु-मचिन्त्य-मसंख्य-माद्यं,
ब्रह्माण-मीश्वर-मनंत-मनङ्गकेतुम् ।
योगीश्वरं विदितयोग-मनेक-मेकं,
ज्ञान-स्वरूप-ममलं प्रवदन्ति संतः ।।24।।

अन्वयार्थ

(सन्तः) सज्जन पुरुष **(त्वाम्)** आपको **(अव्ययम्)** व्यय रहित/अक्षय **(विभुम्)** ज्ञान रूप से व्यापक **(अचिन्त्यम्)** अचिन्त्य **(असंख्यम्)** असंख्य गुणों से युक्त **(आद्यम्)** प्रथम **(ब्रह्माणम्)** ब्रह्मा/ब्रह्म में रमण करने वाला **(ईश्वरम्)** ईश्वर **(अनन्तम्)** अन्त रहित **(अनङ्गकेतुम्)** काम विनाशक **(योगीश्वरं)** योगियों के ईश्वर **(विदित-योगम्)** योग वेत्ता **(अनेकम्)** गुण पर्याय की अपेक्षा अनेक रूप **(एकम्)** एक/अद्वितीय **(ज्ञानस्वरूपम्)** केवलज्ञानी **(अमलं)** कर्म मल से रहित **(प्रवदन्ति)** कहते हैं।

भावार्थ – हे जिनेन्द्र ! सज्जन लोग आपको अव्यय ! विभु ! अचिन्त्य ! आदि! ब्रह्मा ! ईश्वर ! अनन्त ! अनंगकेतु ! योगीश्वर ! विदितयोग ! अनेक ! एक ! ज्ञान स्वरूप और अमल कहते हैं।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठि – विसाणं ।
(ऐसे ऋषि जिन्हें दृष्टिविष ऋद्धि प्राप्त है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

आद्य! अचिन्त्य! असंख्य! अनंत! अनंगकेतु! अक्षय! कहें संत।
विदितयोग! विभु! योगीश्वर! ब्रह्मा! कहते हे भगवन्त।।
कोई कहता ज्ञानस्वरूप, नाथ! आपको अमल! अनूप।
कोई कहता एक! अनेक! अविनाशी! इत्यादिक रूप।।
नाना नामों से, तेरी महिमा गाये रे।।24।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं मनोवांछितफलदायकाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय वलय की पूजा का पूर्णार्घ्य

हत्वा कर्मरिपून् बहून् कटुतरान्, प्राप्तं परं केवलं,
ज्ञानं येन जिनेन मोक्षफलदं, प्राप्तं द्रुतं धर्मजम्।
अर्घेणात्र सुपूजयामि जिनपं श्रीसोमसेनस्त्वहं,
मुक्तिश्रीष्वभिलाषया जिन! विभो! देहि प्रभो! वांछितम्।।

ॐ ह्रीं हृदयस्थितषोडशदलकमलाधिपतये श्री वृषभजिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टि दोष निरोधक

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित–बुद्धि बोधात्,
त्वं शंकरोऽसि भुवन–त्रय–शंकरत्वात् ।
धाताऽसि धीर! शिव–मार्ग–विधे–र्विधानाद्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषोत्तमोऽसि ।।25।।

अन्वयार्थ

(विबुधार्चित) देवों द्वारा अर्चित **(बुद्धि–बोधात्)** केवलज्ञानी होने से **(त्वम्)** आप **(एव)** ही **(बुद्ध)** बुद्ध हो **(भुवनत्रय)** तीनों लोकों में **(शंकरत्वात्)** सुख शान्ति करने से **(त्वम् शंकरोऽसि)** आप ही शंकर हो **(धीर)** हे धैर्य धारण करने वाले प्रभो **(शिवमार्ग)** मोक्षमार्ग की **(विधेः)** विधि का **(विधानात्)** प्रतिपादन करने से **(धाता असि)** विधाता हो **(भगवन्)** हे भगवन्! **(व्यक्तं)** प्रकट रूप से **(त्वम् एव)** आप ही **(पुरुषोत्तमः असि)** पुरुषोत्तम हो।

भावार्थ – हे भगवन् ! देवताओं द्वारा अर्चित, पूजित केवलज्ञानी होने से आप ही बुद्ध हो, तीनों लोकों में सुख शांति करने से आप ही शंकर हो, आप ही धीर हो, मोक्षमार्ग की विधि का प्रतिपादन करने से आप ही विधाता हो, आपने अपनी पर्याय में सर्वोत्कृष्ट पुरुषत्त्व प्रकट कर लिया है, इसलिये आप ही पुरुषोत्तम हो।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्ग – तवाणं।
(ऐसे ऋषि जो उग्र तपश्चरण करते हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

अमर–पूज्य केवलज्ञानी, अतः बुद्ध हो हे ज्ञानी ।
त्रिभुवन में सुख शांति रहे, अतः तुम्हीं शंकर ध्यानी ।।
मोक्षमार्ग विधि बतलाते, अतः विधाता कहलाते ।
व्यक्त किया पुरुषार्थ अतः, पुरुषोत्तम जन–जन गाते ।
प्रभु तुमको ब्रह्मा, शंकर, विष्णु बताये रे ।।25।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं षड्दर्शनपारंगताय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्द्ध-शिर पीड़ा विनाशक

तुभ्यं नमस्-त्रि-भुवनार्तिहराय नाथ!
तुभ्यं नमः क्षिति-तलामल-भूषणाय।
तुभ्यं नमस्-त्रि-जगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिन! भवोदधि-शोषणाय।।26।।

अन्वयार्थ

(नाथ) हे स्वामिन्! **(त्रिभुवनार्तिहराय)** तीनों भुवनों की पीड़ा को नष्ट करने वाले **(तुभ्यं)** आपको **(नमः)** नमस्कार हो **(क्षितितल)** पृथ्वीतल के **(अमल-भूषणाय)** निर्मल आभूषण रूप **(तुभ्यं नमः)** आपको नमस्कार हो **(त्रिजगतः)** तीनों जगत् के **(परमेश्वराय)** परमेश्वर **(तुभ्यं नमः)** आपको नमस्कार हो **(जिन)** हे जिनेन्द्र! **(भवोदधि)** भवरूपी समुद्र को **(शोषणाय)** शोषण करने वाले **(तुभ्यं नमः)** आपको नमस्कार हो।

भावार्थ – तीनों लोकों की पीड़ा हरण करनेवाले, पृथ्वी तल के निर्मल आभूषण, तीनों जगत के परमेश्वर तथा संसार रूपी समुद्र के सुखाने वाले हे स्वामिन्! आपको नमस्कार हो।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्त – तवाणं।
(ऐसे ऋषि जिनके शरीर की कांति सूर्य सम बढ़ती हो उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

त्रिभुवन का दुःख करें हरण, अतः आपको नमन-नमन ।
क्षितितल के निर्मल भूषण, नाथ! आपको नमन-नमन ।।
हे परमेश्वर त्रिजग शरण, सदा आपको नमन-नमन ।
भववारिधि करते शोषण, अतः आपको नमन-नमन ।।
प्रभु तेरा वन्दन, चन्दन बन जाये रे ।।26।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं नानादुःखविलीनाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शत्रु-उन्मूलक

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणै-रशेषैस्-
त्वं संश्रितो निरवकाश-तया मुनीश ।
दोषै-रुपात्त-विविधाश्रय-जात-गर्वैः,
स्वप्नांतरेपि न कदाचि-दपीक्षितोऽसि ।।27।।

अन्वयार्थ

(मुनीश) हे मुनीश्वर! **(यदि नाम)** इन नाम वाले **(त्वम्)** आप **(निरवकाशतया)** अन्य जगह न मिलने के कारण **(अशेषैः)** समस्त **(गुणैः)** गुणों के द्वारा **(संश्रितः)** आश्रय को प्राप्त हुए हो और **(उपात्त)** प्राप्त किया है **(विविध)** अनेक स्थानों पर **(आश्रय)** आश्रय जिन्होंने, उससे **(जात गर्वैः)** उत्पन्न हुआ है अहंकार जिनको ऐसे **(दोषैः)** दोषों के द्वारा **(कदाचित् अपि)** कभी भी **(स्वप्नान्तरे अपि)** स्वप्न में भी **(न)** नहीं **(ईक्षितः असि)** देखे गये हो तो **(अत्र)** इसमें **(कः विस्मयः)** कौन सा आश्चर्य है ? अर्थात् कोई आश्चर्य नहीं है।

भावार्थ – **हे मुनीश्वर! आप विश्व के समस्त गुणों के द्वारा स्वीकार किये गये हो, आश्रय को प्राप्त हुये हो तथा समस्त दोष अहंकार से भरे हुये आपको छोड़कर अन्यत्र स्थान को जब से प्राप्त हुये हैं, तब से स्वप्न में भी उनके द्वारा आप नहीं देखे गये, तो इसमें क्या आश्चर्य है ?**

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्त – तवाणं।
(ऐसे ऋषि जिनके शरीर में भोजन, मल मूत्र नहीं बनता, उन्हें मेरा प्रणाम हो)

* पद्यानुवाद *

हे मुनीश! इन नाम सहित, गणधर सन्तों से अर्चित।
इसमें क्या आश्चर्य प्रभो! हुये सर्वगुण तव आश्रित।।
दोष स्वप्न में दूर अरे, अहंकार में चूर अरे।।
आश्रय पा कामीजन में, इठलाते भरपूर अरे।।
इसमें क्या विस्मय, वो पास न आये रे।।27।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं सकलदोषनिर्मुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व-मनोरथ पूरक

उच्चै-रशोक-तरु-संश्रित-मुन्मयूख -
माभाति रूप-ममलं भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टोल्लसत्-किरण-मस्त-तमो-वितानं,
बिम्बं-रवे-रिव पयोधर-पार्श्ववर्ति ।।28।।

अन्वयार्थ

(उच्चैः) ऊँचे **(अशोक तरु संश्रितम्)** अशोक वृक्ष के नीचे विराजमान **(उन्मयूखम्)** ऊपर की ओर दैदीप्यमान किरणें बिखेरने वाला **(भवतः)** आपका **(अमलम् रूपम्)** निर्मल रूप **(स्पष्ट)** स्पष्ट रूप से **(उल्लसत्)** चमकती हुई **(किरणम्)** किरणों वाले **(अस्त तमोवितानम्)** अन्धकार के विस्तार को नाश करने वाले **(पयोधर)** मेघों के **(पार्श्ववर्ति)** समीपवर्ती **(रवेः बिम्बम्)** सूर्य के बिम्ब के **(इव)** समान **(नितान्तम्)** अत्यधिकता से **(आभाति)** शोभायमान होता है।

भावार्थ – **हे विगतशोक! जिसप्रकार सूर्य का प्रतिबिम्ब अपनी दैदीप्यमान किरणों को स्पष्टतः उर्ध्व में प्रकाशित करते हुये श्यामल सघन बादलों के बीच शोभायमान होता है। उसी प्रकार आपकी स्वर्ण के समान दैदीप्यमान पावन दिव्य देह, रश्मियों को ऊपर की ओर बिखेरती हुई हरित अशोक वृक्ष के नीचे शोभायमान हो रही है।**

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो महा – तवाणं।
(ऐसे ऋषि जो महातप ऋद्धि के धारी हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

❊ पद्यानुवाद ❊

शुभ अशोक तरु अति उन्नत, कंचन सा तव तन शोभित ।
अधंकार को चीर रहीं, उर्ध्वमुखी किरणें विकसित ।।
जैसे दिनकर आया हो, मेघों बीच समाया हो ।
किरण जाल फैलाकर के, स्वर्णिम तेज दिखाया हो ।।
सूरत के आगे, सूरज शर्माये रे ।।28।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं अशोकतरुविराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेत्र-पीड़ा विनाशक

सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातं ।
बिम्बं वियद्-विलसदंशु-लता-वितानं,
तुंगोदयाद्रि-शिरसीव-सहस्र-रश्मेः ।।29।।

अन्वयार्थ

(मणि मयूख) मणियों की किरणों के **(शिखा-विचित्रे)** अग्रभाग से खचित विविध रंग वाले **(सिंहासने)** सिंहासन पर **(कनकावदातम्)** स्वर्ण के समान स्वच्छ **(तव)** आपका **(वपुः)** शरीर **(तुंगोदयाद्रि)** उन्नत उदयाचल के **(शिरसि)** शिखर पर **(वियद् विलसत्)** आकाश में शोभित **(अंशुलता वितानाम्)** किरण रूपी लता समूह वाले **(सहस्ररश्मेः)** सूर्य के **(बिम्बम्)** बिम्ब के **(इव)** समान **(विभ्राजते)** सुशोभित हो रहा है।

भावार्थ – **हे प्रभो! उदयाचल पर्वत की चोटी पर उगता हुआ सूर्य हजारों किरण रूप लताओं का चंदोवा बनाता हुआ जिस प्रकार सुशोभित होता है, उसी प्रकार मणियों की किरणों के अग्र भाग से विविध रंग वाले रत्नजड़ित सिंहासन पर आपकी कंचन काया दीप्तिवन्त हो रही है।**

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोर – तवाणं ।
(ऐसे ऋषि जो घोर तपस्वी हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

❊ पद्यानुवाद ❊

मणि किरणों से हुआ न्हवन, जगमग-जगमग सिंहासन।
नाथ! आपका कंचन सा, उस पर परमौदारिक तन।।
उदयाचल का तुंग शिखर, रश्मि लिये आया दिनकर।
ऐसा शोभित होता है, सिंहासन पर तन प्रभुवर।।
तन की यह आभा, नजरों को बुलाये रे।।29।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं मणिमुक्ता-खचितसिंहासन-प्रातिहार्य-युक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर -सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शत्रु-स्तम्भक

कुन्दावदात-चल-चामर-चारु-शोभं,
विभ्राजते तव वपुः कलधौत-कान्तम् ।
उद्यच्छशाङ्क-शुचि-निर्झर-वारि-धार-
मुच्चैस्तटं सुरगिरे-रिव शातकौम्भम् ।।30।।

अन्वयार्थ

(कुन्दावदात) कुन्द पुष्प के समान स्वच्छ धवल **(चल-चामर)** हिलते हुए चँवर की **(चारुशोभम्)** सुन्दर शोभा से युक्त **(कलधौत कान्तम्)** सुवर्ण के समान कांतिवाला **(तव वपुः)** आपका शरीर **(उद्यच्छशांक)** उदीयमान चन्द्रमा के समान **(शुचि निर्झर)** निर्मल शुभ्र झरने की **(वारिधारम्)** जलधारा के समान **(सुरगिरेः)** सुमेरु पर्वत के **(शातकौम्भम्)** स्वर्णमयी **(उच्चैस्तटम्)** ऊँचे उन्नत तटों के **(इव)** समान **(विभ्राजते)** सुशोभित हो रहा है।

भावार्थ – हे चँवराधीश ! यक्षेन्द्रों द्वारा ढुराये जा रहे चौंसठ चँवरों की कुन्दपुष्प के समान धवल कान्ति से आपका सुन्दर शरीर उसी प्रकार शोभित हो रहा है, जिस प्रकार सुमेरु पर्वत पर कोई चन्द्रकान्ति के समान जल का झरना ऊपर से गिर रहा हो।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोर – गुणाणं ।
(ऐसे ऋषि जो उत्कृष्ट गुणों के धारी हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

कुन्दपुष्प सम श्वेत चँवर, इन्द्र ढुराते हैं तन पर।
स्वर्णमयी काया प्रभु जी, लगती मनहर अति सुन्दर ।।
कनकाचल का तुंग शिखर, शुभ्र ज्योत्सना सा निर्झर ।
झर-झर, झर-झर झरता हो, शोभित चौंसठ शुभ्र चँवर ।।
प्रभु की सेवा में, सुरलोक भी आये रे ।।30।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं चतुः षष्टिचामर – प्रातिहार्य – युक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राज्य-सम्मान दायक

छत्र-त्रयं तव विभाति शशांक-कांत -
मुच्चैः स्थितं स्थगित-भानु-कर-प्रतापम् ।
मुक्ता-फल प्रकर-जाल-विवृद्ध-शोभं,
प्रख्यापयत् - त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ।।31।।

अन्वयार्थ

(शशाङ्क कान्तम्) चन्द्रमा के समान कान्ति वाले **(भानुकर प्रतापम्)** सूर्य की किरणों के प्रचण्ड ताप को **(स्थगित)** रोकने वाले **(मुक्ताफल)** मोतियों के **(प्रकरजाल)** समूह वाली झालर से **(विवृद्धशोभम्)** बढ़ रही है शोभा जिनकी ऐसे **(छत्रत्रयम्)** तीन छत्र **(तव)** आपके **(उच्चैः)** ऊपर **(स्थितम्)** स्थित **(त्रिजगतः)** तीनों जगत् के **(परमेश्वरत्वम्)** परमेश्वरपने को **(प्रख्यापयत्)** प्रकट करते हुए **(विभाति)** शोभायमान हो रहे हैं।

भावार्थ - हे छत्रत्रयाधिपते ! आपके शीर्ष पर चन्द्रकांति के समान सुन्दर मोतियों की झालर से युक्त सूर्य के प्रचण्ड ताप को रोकने वाले, तीन छत्र तीनों जगत् के परमेश्वरपने को, प्रभुता को प्रकट करते हुये अतिशय शोभायमान हो रहे हैं।

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोर - परक्कमाणं ।
(ऐसे ऋषि जो घोर गुण व पराक्रम में श्रेष्ठ हैं, उन्हें मेरा प्रणाम हो)

* पद्यानुवाद *

है शशांक सम कांति प्रखर, तीन छत्र शोभित सिर पर ।
मणिमुक्ता की आभा से, झिलमिल-झिलमिल हो झालर ।
रवि का दुर्द्धर प्रखर प्रताप, रोक दिया है अपने आप ।
प्रगट कर रहे छत्रत्रय, त्रिभुवन के परमेश्वर आप ।।
ईशान इन्द्र आकर, महिमा दिखलाये रे ।।31।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं छत्रत्रयप्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर - सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्रहण-संहारक

गंभीर-तार-रव-पूरित-दिग्-विभागस् -
त्रैलोक्य-लोक-शुभ-संगम-भूति दक्षः ।
सद्धर्मराज-जय-घोषण घोषकः सन्,
खे दुन्दुभि-ध्वर्नति ते यशसः प्रवादी ।।32।।

अन्वयार्थ

(गम्भीर) गम्भीर **(तार-रव-पूरित)** ऊँचे स्वर शब्दों से गुंजायमान कर दिया है **(दिग्विभागः)** दिशाओं के विभागों को जिसने, ऐसा **(त्रैलोक्य)** तीनों लोकों के **(लोक)** प्राणियों को **(शुभसङ्गम)** सत्समागम की **(भूति)** विभूति देने में **(दक्षः)** प्रवीण **(सद्धर्मराज)** समीचीन धर्म एवं तीर्थंकर देव की **(जय घोषण)** जय-जय की उद्घोषणा को **(घोषकः)** घोषित/प्रगट करने वाला **(सन्)** होता हुआ **(दुन्दुभिः)** दुन्दुभि वाद्य **(ते)** आपके **(यशसः)** यश का **(प्रवादी)** विशद कथन करने वाला **(खे)** आकाश में **(ध्वनति)** शब्द कर रहा है।

भावार्थ - हे प्रभो ! गंभीर, स्पष्ट और मधुर निनाद से सम्पूर्ण दिग् मण्डल को गुञ्जायमान करने वाला दुन्दुभि वाद्य सत्समागम कराने वाला आकाश में उच्च स्वर से इसप्रकार बज रहा है, जैसे समीचीन धर्म और तीर्थंकर देव की जय-जयकार करता हुआ उनके यशोगान की घोषणा कर रहा हो।

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं णमो अघोर-गुण-बंभयारीणं।
(ऐसे ऋषि जिनके होते चोरी, युद्धादि बाधायें नहीं होती उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

मधुर, गूढ़, उन्नत स्वर में, दुन्दुभि बजता नभपुर में ।
दशों दिशायें गूँज रहीं, धूम मची है सुरपुर में ।।
तीन लोक के भविजन को, बुला रहा सम्मेलन को ।।
धर्मराज की हो जय-जय, घोष करे रजनी - दिन को ।।
तीनों लोकों में, यश ध्वज फहराये रे ।।32।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं त्रैलोक्याज्ञाविधायिने क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व-ज्वर संहारक

मंदार – सुन्दर – नमेरु – सुपारिजात–
संतानकादि – कुसुमोत्कर – वृष्टि – रुद्धा ।
गंधोद – बिन्दु – शुभ – मन्द – मरुत्प्रपाता,
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा ।।33।।

अन्वयार्थ

(गन्धोदबिन्दु) सुगंधित जल बिन्दुओं से युक्त **(शुभमन्द)** सुखद मंद-मंद **(मरुत्प्रपाता)** समीर के साथ गिरने वाली **(उद्धा)** उर्ध्वमुखी **(दिव्याः)** दिव्य **(मन्दार)** मन्दार जाति के **(सुन्दर)** सुन्दर जाति के **(नमेरु)** नमेरु जाति के **(सुपारिजात)** पारिजात जाति के **(सन्तानकादि)** सन्तानक आदि जाति के **(कुसुमोत्कर)** कल्पवृक्षों के पुष्पों की **(वृष्टिः)** वर्षा **(ते)** आपके **(वचसां)** वचनों की **(ततिःवा)** पंक्ति की तरह **(दिवः)** आकाश से **(पतति)** गिरती है।

भावार्थ – हे प्रभो ! सुगन्धित जल बिन्दुओं से युक्त मन्द-मन्द वायु के झोंकों के साथ गिरने वाली स्वर्गीय सुमनों की वर्षा ऐसी मनहारी लगती है मानो आपकी वचनावली ही पंक्तिबद्ध होकर आकाश से गिरती हुई धरती पर फैल रही हो।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमोसहि – पत्ताणं ।
(ऐसे ऋषि जिनके चरण छूने से ही रोग ठीक हो जाते हैं, उन्हें मेरा प्रणाम हो)

❊ पद्यानुवाद ❊

पारिजात सुन्दर मन्दार, सन्तानक, नमेरू, सुखकार ।
कल्पवृक्ष के ऊर्ध्वमुखी–पुष्प अहा ! गंधोदकधार ।।
वर्षा नित होती रहती, मन्द पवन संग–संग बहती ।
मानो दिव्य वचनमाला, प्रभु की नभ से ही गिरती ।।
प्रभु ऐसी शोभा, कहीं नजर न आये रे ।।33।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं समस्तपुष्पजातिवृष्टिप्रातिहार्याय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गर्भ संरक्षण

शुम्भत्–प्रभा–वलय–भूरि–विभा विभोस्ते,
लोकत्रये द्युतिमतां द्युति–माक्षिपन्ती ।
प्रोद्यद्दिवाकर–निरन्तर–भूरि–संख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोम–सौम्याम् ।।34।।

अन्वयार्थ

(लोकत्रये) तीनों लोकों में **(द्युतिमतां)** सभी कांतिमान पदार्थों की **(द्युतिम्)** कांति को **(आक्षिपन्ती)** तिरस्कृत करने वाली **(प्रोद्यद् दिवाकर)** उदित होते हुए सूर्य की **(निरंतर)** निरंतर **(भूरिसंख्या)** भारी संख्या वाली **(दीप्त्या अपि)** कांति में भी और **(सोम सौम्याम्)** चन्द्र के समान सुन्दर **(विभोः)** हे प्रभो! **(ते)** आपके **(शुम्भत्)** दैदीप्यमान **(प्रभावलय)** भामण्डल की **(भूरि विभाः)** अत्यधिक कान्ति **(निशाम् अपि)** रात्रि को भी **(जयति)** जीतती है।

भावार्थ – हे विभो ! आपके अत्यधिक दैदीप्यमान प्रभामण्डल की कांति तीनों लोकों में सभी कान्तिमान पदार्थों की कान्ति को फीका करने वाली हजारों सूर्यों की सघन कांति से भी बढ़कर चन्द्रमा के समान सुन्दर, शीतल, सौम्य, शांत होने पर भी अपनी प्रभा से रात्रि को भी जीतती है।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो खेल्लोसहि–पत्ताणं।
(ऐसे ऋषि जिनकी लार, थूक, नासिका मल आदि औषधि हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

नाथ आपका भामण्डल, शोभित जैसे सूर्य नवल ।
जीत रहा है रजनी को, चंद्रकांति सम हो शीतल ।।
त्रिभुवन चित्त लुभाते जो, कांतिमान कहलाते जो ।
भामण्डल की आभा से, लज्जित हो शर्माते वो ।।
भामण्डल भवि के, भव सात दिखाये रे ।।34।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं कोटिभास्कर प्रभामण्डितभामण्डल – प्रातिहार्याय क्लीं महाबीजाक्षर – सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ईति -भीति निवारक

स्वर्गापवर्ग – गम – मार्ग – विमार्गणेष्टः,
सद्धर्म – तत्त्व – कथनैक – पटुस्त्रिलोक्याः ।
दिव्यध्वनि – र्भवति ते विशदार्थ – सर्व–
भाषा–स्वभाव–परिणाम–गुणैः प्रयोज्यः ।।35।।

अन्वयार्थ

(स्वर्गापवर्ग) स्वर्ग और मोक्ष **(गम–मार्ग)** जाने के मार्ग को **(विमार्गण)** अनुसंधान/अन्वेषण करने में **(इष्टः)** अभीष्ट **(त्रिलोक्या)** तीनों लोकों को **(सद्धर्मतत्त्व)** समीचीन धर्म के तत्त्व को **(कथनैकपटुः)** कथन करने में अत्यन्त एक मात्र निपुण **(विशदार्थ)** विशद अर्थ और **(सर्वभाषा)** सभी भाषाओं के **(स्वभाव परिणाम)** स्वभाव में परिणत होने के **(गुणैः)** गुणों से **(प्रयोज्यः)** युक्त ऐसी **(ते)** आपकी **(दिव्यध्वनिः)** दिव्य ध्वनि **(भवति)** होती है।

भावार्थ – हे प्रभो ! आपकी दिव्य ध्वनि अभ्युदय और निश्रेयस् पाने के मार्ग का अन्वेषण करने से तीनों लोकों के प्राणियों को इष्ट, समीचीन धर्म के तत्त्वका उपदेश देने में समर्थ, सभी भाषाओं में परिणित होने के स्वभाव से युक्त गुणों वाली द्रव्य गुण पर्यायों का कथन करने में सक्षम होती है।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लोसहि पत्ताणं।
(ऐसे ऋषि जिनका पसीना रोग नाशक है, उन्हें मेरा प्रणाम हो)

* पद्यानुवाद *

स्वर्ग–मोक्ष पथ बतलाती, सत्यधर्म के गुण गाती ।
त्रिभुवन के भवि जीवों को, विशद अर्थ कर दिखलाती ।।
नाथ! दिव्यध्वनि खिरती है , सदा अमंगल हरती है ।
महा–लघु भाषाओं में, स्वयं परिणमन करती है ।।
प्रभु की दिव्यध्वनि, भव रोग मिटाये रे ।।35।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं जलधरापटलगर्जित– सर्वभाषात्मक–योजनप्रमाण दिव्य ध्वनिप्रातिहार्याय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लक्ष्मी प्रदायक

उन्निद्र–हेम–नव–पंकज–पुंज–कांति,
पर्युल्लसन्– नख–मयूख–शिखाभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः,
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ।।36।।

अन्वयार्थ

(जिनेन्द्र) हे जिनेन्द्र! **(उन्निद्र)** खिले हुए **(हेम)** स्वर्ण के **(नव)** नवीन **(पङ्कज)** कमलों के **(पुञ्ज)** समूह के समान **(कांति)** कांति वाले **(पर्युल्लसन्)** सर्व ओर फैलने वाली **(नखमयूख)** नखों के किरणों की **(शिखाभिरामौ)** अग्रभाग से सुन्दर **(तव)** आपके **(पादौ)** द्वय चरण **(यत्र)** जहाँ पर **(पदानि)** पग/डग/कदम **(धत्तः)** रखते हैं **(तत्र)** वहाँ पर **(विबुधाः)** देवगण **(पद्मानि)** कमलों की **(परिकल्पयन्ति)** संरचना करते जाते हैं।

भावार्थ – हे जिनेन्द्र देव ! आपके पावन युगल चरण जिनके नखों से सर्व ओर दीप्तिमान किरणें फैल रही हैं, खिले हुये नवीन स्वर्ण कमलों के समान कान्ति वाले हैं। धर्मोपदेश के समय भव्य जीवों के पुण्य से जब आपका विहार होता है, तब जहाँ–जहाँ कदम रखे जाते हैं, वहाँ–वहाँ देवगण कमलों की रचना करते जाते हैं।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो विट्ठोसहि – पत्ताणं।
(ऐसे ऋषि जिनका मल, मूत्र, औषधि है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

नूतन विकसित स्वर्ण कमल, कांतिमान नख अतिनिर्मल ।
फैल रही आभा जिनकी, सर्वदिशाओं में उज्ज्वल ।।
आप गमन जब करते हैं, सहज कदम जब धरते हैं ।
दो सौ पच्चिस स्वर्ण कमल, विबुध चरणतल रचते हैं ।।
नभ में प्रभु तेरा, अतिशय दिखलाये रे ।।36।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं पादन्यासे पद्मश्रीयुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर – सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुष्टता-प्रतिरोधक

इत्थं यथा तव विभूति-रभूज्-जिनेन्द्र !
धर्मोपदेशन - विधौ न तथा परस्य ।
यादृक-प्रभा दिन-कृतः प्रहतान्धकारा,
तादृक कुतो ग्रह-गणस्य विकासिनोऽपि ।।37।।

अन्वयार्थ

(जिनेन्द्र) हे जिनेन्द्र! **(इत्थं)** इसप्रकार **(तव)** आपकी **(धर्मोपदेशनविधौ)** धर्मोपदेश देने के समय **(यथा)** जिसप्रकार की **(विभूतिः)** सम्पत्ति **(अभूत)** हुई थी **(तथा)** वैसी **(परस्य न)** अन्य देवों की/धर्मप्रर्वतकों की नहीं हुई **(प्रहतान्धकारा)** अन्धकार को नाश करने वाली **(यादृक्)** जैसी **(प्रभा)** ज्योति **(दिनकृतः)** सूर्य की **(भवति)** होती है **(तादृक्)** वैसी **(विकासिनः)** विकसित/चमकते हुए **(अपि)** भी **(ग्रहगणस्य)** तारागणों की **(कुतः)** कैसे हो सकती है ? अर्थात् नहीं हो सकती है।

भावार्थ - हे जिनेन्द्र ! समवशरण में धर्मोपदेश के समय जैसी (पूर्व श्लोक में कही गई) अष्ट प्रातिहार्य रूप विभूति आपके पास थी, वैसी अन्य धर्म के प्रवर्तकों के पास नहीं हुई। सो ठीक ही है ,जैसी अन्धकार को तिरोहित करने वाली ज्योति सूर्य की होती है, क्या वैसी अन्य तारागणों की हो सकती है अर्थात् कभी नहीं हो सकती।

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहि - पत्ताणं।
(जिनके नख, रोमादि औषधि हैं, ऐसे मुनिवर को मेरा प्रणाम हो)

* पद्यानुवाद *

भूति न त्रिभुवन में ऐसी, धर्मदेशना में जैसी ।
प्रातिहार्य वसु समवशरण, अन्य देव में न वैसी ।।
अंधकार के हनकर की, जैसी आभा दिनकर की ।
वैसी ही आभा कैसे? हो सकती तारागण की ।।
तीर्थंकर जैसा, ना पुण्य दिखाये रे ।।37।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं धर्मोपदेशसमये समवशरणादि लक्ष्मीविभूतिविराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हस्तिमद-भञ्जक

श्च्योतन्-मदाविल-विलोल-कपोल-मूल-
मत्त-भ्रमद्-भ्रमर-नाद-विवृद्ध-कोपम् ।
ऐरावताभ - मिभ - मुद्धत - मापतन्तं,
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानां ।।38।।

अन्वयार्थ

(श्च्योतन्) झरते हुए **(मदाविल)** मद से मलिन **(विलोल)** चंचल **(कपोलमूल)** गण्डस्थल पर **(मत्त)** उन्मत्त/बेसुध **(भ्रमद)** मँडराते हुए **(भ्रमर)** भौंरे **(नाद)** अपने गुंजन से **(विवृद्धकोपम्)** क्रोध बढ़ा रहे हैं जिसका ऐसे **(ऐरावताभम्)** ऐरावत (हाथी) के समान विशाल **(आपतन्तम्)** सामने आते हुए **(उद्धतम्)** उद्दण्ड **(इभम्)** हाथी को **(दृष्टवा)** देखकर **(भवदाश्रितानाम्)** आपके शरणागतों को **(भयम्)** भय **(नो)** नहीं **(भवति)** होता है।

भावार्थ - हे निर्भय ! ऐरावत हाथी के समान विशालकाय वाला कोई उद्दण्ड, अभिमानी, मद से मलिन, क्रोध से उन्मत्त हाथी को सामने से आता हुआ देखकर भी आपका शरणागत किंचित भी भय को प्राप्त नहीं होता।

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं णमो मण - बलीणं।
(जो मनोबल ऋद्धि के धारी हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

झर-झर झरता हो मदबल, जिसका चंचल गण्डस्थल ।
भ्रमरों के परिगुंजन से, क्रोध बढ़ रहा खूब प्रबल ।।
ऐरावत गज आ जाये, भक्त जरा न भय खाये ।
नाथ! आपके आश्रय का, जन-जन यह अतिशय गाये ।।
प्रभु की भक्ति से, भय भी टल जाये रे ।।38।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं हस्त्यादिगर्व दुर्द्धर भय निवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंह-शक्ति संहारक

भिन्नेभ-कुम्भ-गल दुज्ज्वल-शोणिताक्त-
मुक्ता-फल-प्रकर-भूषित-भूमि-भाग: ।
बद्ध-क्रम: क्रम-गतं हरिणाधिपोऽपि,
नाक्रामति क्रम-युगाचल-संश्रितं ते ।।39।।

अन्वयार्थ

(भिन्नेभ) विदीर्ण किये गये हाथियों के **(कुम्भगलत्)** गण्डस्थल उनसे निकल रहे **(उज्ज्वल)** धवल/उज्ज्वल वर्ण वाले **(शोणिताक्त)** रक्त से सने हुए **(मुक्ताफल)** गजमुक्ता के **(प्रकर)** समूह से **(भूषित)** सुशोभित **(भूमिभाग:)** भूमि का भाग जिसने ऐसा **(हरिणाधिप: अपि)** मृगराज (सिंह) भी **(क्रमगतं)** पंजों के बीच पड़ा हुआ किन्तु **(ते)** आपके **(क्रमयुगाचल)** चरण युगल रूपी पर्वत के **(संश्रितम्)** आश्रित भक्त पुरुष पर **(बद्धक्रम:)** बंधे हुए पैरों वाला जैसा होकर **(न आक्रामति)** आक्रमण नहीं करता।

भावार्थ – **हे आश्रयदाता ! महाबलिष्ठ मृगेन्द्र भी जिसने बड़े-बड़े भीमकाय हाथियों के गण्डस्थल विदीर्णकर गजमुक्ता धरती पर बिखेर दिये हैं। ऐसे आक्रामक सिंह के पंजों के मध्य पड़े हुये आपके परम भक्तों पर खूँखार सिंह भी आक्रमण नहीं करता, अर्थात् वो भी अपनी क्रूरता को छोड़ देता है।**

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचि – बलीणं।
(ऐसे ऋषि जो वचन बल ऋद्धि के धारी हैं, उन्हें मेरा प्रणाम हो)

* पद्यानुवाद *

चीर दिया गज गण्डस्थल, मस्तक से झरते उज्ज्वल ।
रक्त सने मुक्ताओं से, हुआ सुशोभित अवनीतल ।।
ऐसा सिंह महा विकराल, बँधे पाँव सा हो तत्काल ।
नाथ! आपके चरण युगल-आश्रय से हो भक्त निहाल ।।
प्रभु तेरी भक्ति, निर्भयता लाये रे ।।39।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं युगादिदेवनामप्रसादात् केशरिभयविनाशकाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वाग्नि-शामक

कल्पांत-काल-पवनोद्धत-वन्हि-कल्पं,
दावानलं ज्वलित-मुज्ज्वल-मुत्स्फुलिङ्गम् ।
विश्वं जिघत्सु-मिव सम्मुख-मापतन्तं,
त्वन्नाम-कीर्तन-जलं शमयत्यशेषम्।।40।।

अन्वयार्थ

(कल्पान्तकाल) प्रलयकाल के **(पवनोद्धत)** महावायु के वेग से उत्तेजित **(वह्नि)** अग्नि के **(कल्पम्)** समान **(ज्वलितम्)** जलती हुई **(उज्ज्वलम्)** निर्धूम होने से उज्ज्वल और **(उत्स्फुलिंगम्)** चतुर्दिक, फैंकती हुई चिन्गारियों से युक्त **(विश्वम्)** समस्त संसार को **(जिघत्सुमिव)** भस्म करने की इच्छा की तरह **(सम्मुखम्)** सामने **(आपतन्तम्)** आती हुई **(दावानलम्)** जंगल की आगम को **(त्वन्नाम)** आपके नाम का **(कीर्तन)** स्मरण रूपी **(जलम्)** जल **(अशेषम्)** पूर्ण रूप से **(शमयति)** शान्त कर देता है।

भावार्थ – **हे जिनेन्द्र प्रभु! प्रलयकाल की महावायु से उत्तेजित दावाग्नि जो मानों आकाश को ही भक्षण करना चाहती हो। ऐसी चारों ओर चिंगारियाँ फेंकती हुई सामने आती हुई होने पर भी आपके नाम का स्मरण मात्र करने से पूर्णत: उपशम को प्राप्त हो जाती है।**

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो काय बलीणं।
(जो ऋषि जो कायबल ऋद्धि के धारी हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

प्रलयकाल की चले बयार, मचा हुआ हो हाहाकार ।
उज्ज्वल, ज्वलित फुलिंगों से, दावानल करती संहार ।।
जपे नाम की जो माला, नाम मंत्र का जल डाला ।
शीघ्र शमन हो दावानल, नाम बड़ा अचरज वाला ।।
भक्ति ही ऐसा, अचरज दिखलाये रे ।।40।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं संसाराग्नितापनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर – सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भुजङ्ग-भय भञ्जक

रक्तेक्षणं समद - कोकिल - कण्ठ - नीलं,
क्रोधोद्धतं फणिन - मुत्फण - मापतन्तम् ।
आक्रामति क्रम - युगेण निरस्त - शंकस्-
त्वन्नाम - नागदमनी हृदि यस्य पुंसः ।।41।।

अन्वयार्थ

(यस्य) जिस **(पुंसः)** पुरुष के **(हृदि)** हृदय में **(त्वन्नाम)** आपके नाम रूपी **(नागदमनी)** नाग के विष का दमन करने वाली जड़ीबूटी है **(सः)** वह **(निरस्तशंकः)** शंका से रहित होकर **(रक्तेक्षणम्)** रक्तवर्ण नेत्रोंवाले **(समद-कोकिल)** उन्मत्त कोयल के **(कण्ठनीलम्)** कण्ठ के समान काले **(क्रोधोद्धतम्)** क्रोध से उददण्ड **(आपतन्तम्)** सामने आते हुये **(उत्फणं)** ऊपर को फण उठाये हुए **(फणिनम्)** सर्प को **(क्रमयुगेण)** दोनों पैरों से **(आक्रामति)** लाँघ जाता है।

भावार्थ - हे प्रभो ! जिस पुरुष के हृदय में आपके नाम रूपी नाग के विष को दमन करने वाली औषधि है, वह भयंकर विषयुक्त सर्प को आसानी से लाँघ जाता है, अर्थात् आपके सच्चे भक्त का विषधर भी कुछ बिगाड़ नहीं कर पाते।

जाप - ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीर - सवीणं।
(ऐसे ऋषि जिनके हाथ का रूखा भोजन दूध जैसा हो जाता है,
उन्हें मेरा प्रणाम हो)

* पद्यानुवाद *

लाल-लाल लोचनवाला, कंठ कोकिला सा काला ।
जिव्हा लप-लप कर चलता, नाग महाविष फण वाला ।।
नाम नागदमनी जिसके, हृदय बसी हो फिर उसके ।
शंका की न बात कोई, साँप लाँघ जाता हँसके ।।
भक्तों को विषधर, न कभी डराये रे ।।41।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं त्वन्नामनागदमनी - शक्तिसम्पन्नाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

युद्ध-भय विनाशक

वल्गत्तुरंग – गज – गर्जित – भीमनाद–
माजौ बलं बलवता – मपि भूपतीनां ।
उद्यद्दिवाकर – मयूख – शिखा – पविद्धं,
त्वत्–कीर्त्तनात्–तम इवाशु भिदा–मुपैति ।।42।।

अन्वयार्थ

(आजौ) युद्ध स्थल में **(त्वत्कीर्तनात्)** आपके नाम के कीर्तन से **(बलवताम्)** बलशाली/पराक्रमी **(भूपतीनाम्)** राजाओं के **(वल्गत्)** उछलते हुए **(तुरङ्ग)** घोड़ों तथा **(गज–गर्जित)** हाथी की गर्जना से **(भीमनादम्)** भयंकर हो रही है आवाज जिसमें ऐसी **(बलम्)** सेना **(अपि)** भी **(उद्यद्दिवाकर)** उदीयमान दिवाकर की **(मयूख–शिखा)** किरणों के अग्रभाग से **(अपविद्धम्)** दूर किया हुआ **(तमः इव)** अन्धकार के समान **(आशु)** तत्काल **(भिदाम्)** छिन्न-भिन्न **(उपैति)** हो जाती है।

भावार्थ – हे कर्मजेता ! संग्राम स्थल में हिनहिनाते हुये अश्व और चिंघाड़ते हुये गज से सुसज्जित शत्रु पक्ष के राजाओं की अपराजेय सेना आपके नाम के स्मरण से शीघ्र ही तितर–बितर हो जाती है, मानो सूर्य के उदय से दीप्ति किरणों द्वारा अंधकार नष्ट कर दिया गया हो।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पि – सवीणं।
(ऐसे ऋषि जिनके हाथ पर रखा रूखा भोजन भी घी युक्त हो जाता है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

उछल रहे हों जहाँ तुरंग, गजगर्जन हो सैन्य उमंग ।
बलशाली राजा रण में दिखा रहे हों अपना रंग ।।
सूर्य किरण सेना लाता, तिमिर कहाँ फिर रह पाता ।
नाम आपका जो जपता, रण में भी ध्वज फहराता ।।
प्रभु के भक्तों को, कब कौन हराये रे ।।42।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं संग्राममध्ये क्षेमंकराय क्लीं महाबीजाक्षर – सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व शांति दायक

कुन्ताग्र–भिन्न–गज–शोणित–वारिवाह–
वेगावतार–तरणातुर –योध–भीमे ।
युद्धे जयं विजित–दुर्जय–जेय–पक्षास्–
त्वत्पाद–पंकज–वनाश्रयिणो लभन्ते ।।43।।

अन्वयार्थ

(कुन्ताग्र) बरछी, भालों के नुकीले भाग से **(भिन्न)** छिन्न भिन्न हुए **(गज)** हाथियों के **(शोणित)** रक्तरूपी **(वारिवाह)** जल के प्रवाह में **(वेगावतार)** तेजी से/वेग से उतरने में **(तरणातुर)** तैरने में आतुर/उतावले **(योधभीमे)** योद्धाओं से युक्त **(युद्धे)** युद्ध में **(त्वत्पादपङ्कज)** आपके चरण कमल रूपी **(वनाश्रयिण:)** वन का आश्रय/सहारा लेने वाले पुरुष **(विजित दुर्जय)** जिसको जीतना कठिन है ऐसे **(जेय पक्षा:)** शत्रु पक्ष को पराजित करके **(जयम्)** विजय को **(लभन्ते)** प्राप्त करते हैं।

भावार्थ –हे त्रिलोकजयी प्रभु ! अपराजेय शक्तिशाली शत्रुपक्ष को आपके चरण कमल का आश्रय लेने वाले भक्त सहजता से जीतकर विजयश्री हासिल कर लेते हैं।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुर – सवीणं।
(ऐसे ऋषि जिनके हाथ पर आया रूखा भोजन मधुर रसयुक्त हो जाता है, उन्हें मेरा प्रणाम हो)

* पद्यानुवाद *

क्षत–विक्षत गज भालों से, हुआ सामना लालों से ।
जल सम रक्त नदी जिसमें, तरणातुर वह सालों से ।।
नाथ! जीतना हो दुर्जय, रण में होती शीघ्र विजय ।
नाथ! पाद पंकज वन का, लिया जिन्होंने भी आश्रय ।।
प्रभु के भक्तों को, जय तिलक लगाये रे ।।43।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं वनगजादिभयनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर– सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वापत्ति विनाशक

अम्भोनिधौ क्षुभित–भीषण नक्र–चक्र–
पाठीन–पीठ–भय– दोल्वण–वाडवाग्नौ ।
रङ्गत्तरंङ्ग–शिखर–स्थित–यान–पात्रास्–
त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ।।44।।

अन्वयार्थ

(क्षुभित) क्षोभ को प्राप्त होने से **(भीषण)** भयंकर **(नक्र–चक्र)** मगरमच्छ घड़ियाल तथा **(पाठीन–पीठ)** विशालकाय मछलियों की पीठ की टक्कर से **(भयदोल्वण)** भय को उत्पन्न करने वाले **(वाडवाग्नौ)** बड़वानल से युक्त **(अम्भोनिधौ)** समुद्र में **(रङ्गतरङ्ग)** उछलती हुई लहरों के **(शिखर)** अग्रभाग पर **(स्थित)** डगमगा रहे हैं **(यानपात्राः)** जहाज वाले पुरुष/प्राणी **(भवतः)** आपके **(स्मरणात्)** स्मरण से **(त्रासं)** आकस्मिक भय को/घबराहट को **(विहाय)** छोड़कर **(व्रजन्ति)** चले जाते हैं अर्थात् गन्तव्य को प्राप्त कर लेते हैं।

भावार्थ – **हे भगवन् ! कुपित होते हुये मगरमच्छ और घड़ियाल से युक्त भयंकर समुद्र में जहाँ बड़वानल उठ रही हो, ऐसे उछलती हुई लहरों के अग्रभाग पर स्थित जहाज भी आपके नाम का स्मरण करने मात्र से भय मुक्त हो यात्रा करते हुये गन्तव्य स्थान को प्राप्त होते हैं।**

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमिय – सवीणं।
(ऐसे ऋषि जिनको रूखा भोजन हाथ में देने पर अमृत समान हो जाता है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

मगरमच्छ एवं घडियाल, भीमकाय मछली विकराल ।
महाभयानक बड़वानल, उठती हों लहरें उत्ताल ।।
डगमग–डगमग हों जलयान, चीत्कार कर रहे पुमान ।
नाम स्मरण से भगवन्, शीघ्र पहुँचते तट पर यान।।
प्रभु की भक्ति से, संकट कट जाये रे ।।44।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं संसाराब्धितारणाय क्लीं महाबीजाक्षर – सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जलोदरादि-विनाशक

उद्भूत-भीषण-जलोदर-भार-भुग्नाः,
शोच्यां दशा-मुपगताश्च्युत-जीविताशाः ।
त्वत्पाद-पंकज-रजोऽमृत-दिग्ध देहा,
मर्त्या भवन्ति मकरध्वज-तुल्य-रूपाः ।।45।।

अन्वयार्थ

(उद्भूत) उत्पन्न हुए **(भीषण)** भयंकर **(जलोदर)** जलोदर रोग के **(भारभुग्नाः)** भार से पीड़ित हो झुके हुये **(शोच्यां)** शोचनीय **(दशाम्)** दशा को **(उपगताः)** प्राप्त हुए **(च्युतजीविताशाः)** छोड़ दी है जीने की आशा जिन्होंने ऐसे **(मर्त्याः)** मनुष्य **(त्वत्पादपंकज)** आपके चरण कमलों की **(रजोऽमृत)** रज रूपी अमृत से **(दिग्धदेहाः)** देह को लिप्त करके **(मकरध्वज)** कामदेव के **(तुल्यरूपाः)** समान रूप वाले **(भवन्ति)** हो जाते हैं।

भावार्थ – हे भवरोग हर्ता ! जिन मनुष्यों को महाभयंकर जलोदर रोग हो गया है, जिसके भार से कमर टेढ़ी हो गयी, तथा जिन्होंने अत्यंत दयनीय अवस्था को प्राप्त कर अपने जीवन की भी आशा त्याग दी, ऐसे असाध्य रोग से पीड़ितजन यदि आपके चरण कमल की रजरूपी अमृत को देह पर लगा लेते हैं, तो जलोदर रोग से मुक्त हो कामदेव सा सुन्दर रूप प्राप्त कर लेते हैं।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीण – महाणसाणं।
(ऐसे ऋषि जो जहाँ पर आहार करें उस गृह का भोजन उस दिन समाप्त न हो, ऐसे अक्षीण महानस ऋद्धि के धारी हैं, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

❊ पद्यानुवाद ❊

उपजा महा जलोदर भार, वक्र हुआ तन का आकार ।
जीने की आशा छोड़ी, शोचनीय है दशा अपार ।।
नाथ! चरण रज मिल जाये, रोग दशा भी ढल जाये ।
सच कहता हूँ देह प्रभो! कामदेव सी खिल जाये ।।
चरणों की रज भी, औषधि बन जाये रे ।।45।।

अर्घ्य–ॐ ह्रीं दाहतापजलोदराष्टदशकुष्टसन्निपातादिरोगहराय क्लीं महाबीजाक्षर–सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बंधन विमोचक

आपाद-कंठ मुरु-शृंखल-वेष्टितांगा,
गाढं वृहन्निगड-कोटि-निघृष्ट-जंघाः ।
त्वन्नाम-मंत्र-मनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
सद्यः स्वयं विगत-बंध-भया भवन्ति ।।46।।

अन्वयार्थ

(आपादकण्ठम्) पैरों से लेकर ग्रीवा तक **(उरुशृंखल)** बड़ी-बड़ी मजबूत साँकलों से **(वेष्टिताङ्गा)** वेष्टित अंग वाले **(गाढ़म्)** अत्यन्त कसकर बाँधी गयी **(बृहन्निगडकोटि)** बड़ी-बड़ी बेड़ियों के किनारों से **(निघृष्टजङ्घाः)** घिस गई हैं जाँघें जिनकी ऐसे **(मनुजाः)** मनुष्य **(त्वन्नाम)** आपके नाम रूपी **(मन्त्रम्)** मन्त्र को **(अनिशम्)** निरन्तर **(स्मरंतः)** स्मरण करते हुए **(सद्यः)** शीघ्र ही **(स्वयम्)** अपने आप **(विगत बन्धभया)** दूर हो गया है बंधन का भय जिनका, ऐसे **(भवन्ति)** हो जाते हैं।

भावार्थ – हे निर्बन्ध ! जिन मनुष्यों का शरीर पैरों से लेकर ग्रीवा तक विशाल मजबूत साँकलों से बाँध दिया गया हो, जिससे उनकी जँघायें भी बुरी तरह छिल गई हों। ऐसे मनुष्य यदि आपके नामरूपी मंत्र का स्मरण निरन्तर ही करते हैं, तो वे मनुष्य शीघ्र ही अपने आप बंधन से मुक्त हो जाते हैं।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं।
(ऐसे ऋषि जिनका ज्ञान बढ़ता हुआ है, उन्हें मेरा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

सिर से पैरों तक बन्धन, जंजीरों से बाँधा तन ।
हाथ-पैर जंघाओं से, रक्त बह रहा रात और दिन ।।
बंदीजन करलें शुभ काम, नाम मंत्र जपलें अविराम ।
नाथ ! आपकी भक्ति से, बंधन भय पाता विश्राम ।।
प्रभु की भक्ति से, बंधन खुल जाये रे ।।46।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं नानाविधकठिनबन्धनदूरकरणाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्त्र-शस्त्रादि निरोधक

मत्त द्विपेन्द्र-मृगराज-दवानलाहि-
संग्राम-वारिधि-महोदर-बंधनोत्थम् ।
तस्याशु नाश-मुपयाति भयं भियेव,
यस्तावकं स्तव-मिमं मतिमा-नधीते ।।47।।

अन्वयार्थ

(यः) जो **(मतिमान्)** बुद्धिमान **(ताव्कम्)** आपके **(इमम्)** इस **(स्तवम्)** स्तोत्र को **(अधीते)** पढ़ता है **(तस्य)** उसका **(मत्तद्विपेन्द्र)** मदोन्मत्त हाथी **(मृगराज)** सिंह **(दावानल)** वानाग्नि **(अहि)** सर्प **(सङ्ग्राम)** युद्ध **(वारिधि)** समुद्र **(महोदर)** जलोदर तथा **(बन्धनोत्थम्)** बन्धन से उत्पन्न हुआ **(भयम्)** भय/डर **(भियेव)** भय के कारण ही मानो **(आशु)** तत्काल ही **(नाशम् उपयाति)** विनाश को प्राप्त हो जाता है।

भावार्थ – हे आदिनाथ भगवन्! उन्मत्त हाथी, सिंह, दावाग्नि, सर्प, संग्राम, समुद्र, जलोदर, बन्धन आदि महा भयंकर पीड़ा देने वाले भय भी जिस बुद्धिमान पुरुष के द्वारा आपके पावन स्तोत्र का पाठ किया जाता है उससे भयाकुलित हो स्वयमेव शीघ्र ही विनाश को प्राप्त हो जाते हैं।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो सिद्धायदणाणं।
(जो ऋषि जिनका ज्ञान सिद्धिदायी है, उन्हें मेरा प्रणाम हो)

* पद्यानुवाद *

सर्व, दवानल, गज चिंघाड़, युद्ध, समुद्र व सिंह दहाड़ ।
नाथ ! जलोदर हो चाहे – बन्धन का भय रहे प्रगाढ़ ।।
नाथ ! आपका स्तुतिगान, करता है जो भी मतिमान ।
भय भी भयाकुलित होकर, शीघ्र स्वयं होता गतिमान ।।
प्रभु की भक्ति से, भय भी भय खाये रे ।।47।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं बहुविधविघ्नविनाशनाय क्लीं महाबीजाक्षर – सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोक्ष-लक्ष्मी प्रदायक

स्तोत्र स्रजं तव जिनेन्द्र! गुणै-र्निबद्धां,
भक्त्या मया रुचिर-वर्ण-विचित्र-पुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कंठ-गता-मजस्रं,
तं मानतुंग-मवशा समुपैति लक्ष्मी: ।।48।।

अन्वयार्थ

(इह) इस लोक में **(भक्त्या)** भक्ति पूर्वक **(मया)** मेरे द्वारा **(तव)** आपके **(गुणै:)** गुणों से **(निबद्धाम्)** रची गई **(विविध)** नाना **(वर्ण)** अक्षर ही हैं **(विचित्र)** रंग बिरंगे **(पुष्पाम्)** पुष्प जिसमें ऐसी **(स्तोत्र-स्रजम्)** स्तोत्र रूपी माला को **(य: जन:)** जो मनुष्य **(अजस्रं)** निरन्तर **(कण्ठगताम्)** कण्ठ में **(धत्ते)** धारण करता है/याद करता है **(तम्)** उस **(मानतुंगम्)** स्वाभिमानी अथवा मानतुंग पुरुष को **(अवशा)** विवश होकर **(लक्ष्मी:)** सर्व प्रकार की लौकिक और परलौकिक लक्ष्मी **(समुपैति)** प्राप्त होती है।

भावार्थ – हे जिनेन्द्र ! मेरे द्वारा (मानतुंगाचार्य द्वारा) जो आपके गुणों से निबद्ध की गई सुन्दर वर्ण वाली अनेक स्वर व्यंजन रूपी पुष्पों से युक्त यह श्री भक्तामर स्तोत्र रूपी माला जो भक्ति भाव पूर्वक हमेशा अपने कण्ठ में धारण करता है। लोक में उस सम्मानीय पुरुष को स्वयमेव अभ्युदय और निश्रेयस् रूप लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

जाप – ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्व साहूणं।
(सभी सच्चे साधुओं को मेरा हमेशा-हमेशा प्रणाम होवे)

* पद्यानुवाद *

गुण बगिया में आये हैं, अक्षर पुष्प खिलाये हैं ।
विविध पुष्प चुन भक्ति से, स्तुतिमाल बनाये हैं ।।
करे कण्ठ में जो धारण, मनुज रहे न साधारण ।
'मानतुंग' सम मुक्ति श्री, आलिंगित हो बिन कारण ।।
प्रभु गुण की महिमा, निज गुण विकसाये रे ।।48।।

अर्घ्य-ॐ ह्रीं सकलकार्यसाधनसामर्थाय क्लीं महाबीजाक्षर – सहिताय हृदयस्थिताय श्री वृषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय वलय की पूजा का पूर्णार्घ्य

नाना–विघ्नहरं प्रताप–जनकं, संसार–पारप्रदं,
संस्तुत्यं श्रीदं करोमि सततं, श्रीसोमसेनोऽप्यहम्।
पूर्णार्घेण मुदा सुभव्यसुखदं, आदीश्वराख्या परं,
हीरापण्डितसूपरोधवशतः स्तोत्रस्य पूजाविधिम्।।49।।

ॐ ह्रीं हृदयस्थिताय चतुर्विंशतिदलकमलाधिपतये क्लीं
महाबीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(समुच्चय अर्घ्य)

वरसुगन्ध–सुतन्दुलपुष्पकैः, प्रवरमोदक–दीपक–धूपकैः ।
फल भरैः परमात्म–प्रदत्तकं, प्रवियजे जयदं धनदं जिनम् ।।50।।

ॐ ह्रीं हृदयस्थिताय अष्टचत्वारिंशद् दलकमलाधिपतये क्लीं
महाबीजाक्षरसहिताय श्रीवृषभदेवाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जलगन्धाष्टभिर्द्रव्यै–र्युगादि पुरुषं यजे ।
सोमसेनेन संसेव्यं, तीर्थसागर–चर्चितम् ।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

भक्तामर महाकाव्यमण्डल–पूजा जयमाला

(तोटक वृत्तार)

शुभदेश–शुभङ्करकौशलकं, पुरुपट्टन–मध्य–सरोजसमम्।
नृपनाभि–नरेन्द्रसुतं सुधियं, प्रणमामि सदा वृषभादिजिनम्।।
कृतकारित–मोदन–मोदधरं, मनसा वचसा शुभकार्य–परम्।
दुरितापहरं चामोदकरं, प्रणमामि सदा वृषभादिजिनम्।।
तवदेव सुजन्म–दिने परमं, वर निर्मित–मङ्गल–द्रव्यशुभम्।
कनकाद्रिसुपाण्डुकपीठगतिं, प्रणमामि सदा वृषभादिजिनम्।।
व्रतभूषण–भूरिविशेषं तनुं, करकङ्कण–काञ्जलनेत्रचणम्।
मुकुटाब्जविराजितचारुमुखं, प्रणमामि सदा वृषभादि जिनम्।।
ललितास्यसुराजितचारुमुखं मरुदेविसमुद्भवजातसुखम्।
सुरनाथसुताण्डवनृत्यधरं, प्रणमामि सदा वृषभादि जिनम्।।
वरवस्त्र–सरोज–गजाश्वपदं, रथभृत्यदलं चतुरङ्गजदम्।
शिवभीरुसुभोग–सुयोगधनं, प्रणमामि सदा वृषभादि जिनम्।।
गतरागसुदोष–विरागकृतिं, सुतपोबलसाधित–मुक्तिगतिम्।
सुखसागरमध्यसदानिलयं, प्रणमामि सदा वृषभादि जिनम्।।
सुसमोशरणे रतिरोगहरं, परिसदृश–युग्म–सुदिव्यध्वनिम्।
कृतकेवलज्ञानविकाशतनं, प्रणमामि सदा वृषभादि जिनम्।।
उपदेशसुतत्त्व–विकाशकरं, कमलाकर–लक्षण–पूर्णभरम्।
भवित्रासितकर्मकलङ्कहरं, प्रणमामि सदा वृषभादि जिनम्।।
जिन! देहि सुमोक्षपदं सुखदं, घनघाति–घनाघन–वायुपदम्।
परमोत्सवकारितजन्मदिनं, प्रणमामि सदा वृषभादि जिनम्।।

संसार–सागरोत्तीर्णं, मोक्षसौख्य–पदप्रदम् ।
नमामि सोमसेनार्च्य, मादिनाथं जिनेश्वरम् ।।

ॐ ह्रीं पूजाकर्तु: कर्मनाशनाय आगतविघ्नभयनिवारणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स भवति जिनदेवः पञ्चकल्याण–नाथः।
कलिलमल–सुहर्त्ता, विश्व–विघ्नौघहन्ता।
शिवपद–सुख हेतुः, नाभिराजस्य सुनुः,
भवजलनिधिपोतो, विश्वमोक्षाय नाथ ।।

।। इत्याशीर्वादः परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

दीर्घायुरस्तु, शुभमस्तु, सुकीर्तिरस्तु, सद्बुद्धिरस्तु, धनधान्य–समृद्धिरस्तु, आरोग्यमस्तु विजयोऽस्तु, महोऽस्तु पुत्रपौत्रोद्भवोऽस्तु तव सिद्धपति–प्रसादात् ।।

(परिपुष्पांजलि क्षिपेत्)

ऋद्धि अर्घ

1. ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
2. ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहिजिणाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
3. ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहि जिणाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
4. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहिजिणाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
5. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहिजिणाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
6. ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठबुद्धीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
7. ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीजबुद्धीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
8. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पादाणुसारिणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
9. ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिन्नसोदाराणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
10. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
11. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेयबुद्धाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
12. ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहियबुद्धाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
13. ॐ ह्रीं अर्हं णमो उजुमदीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
14. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
15. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दसपुव्वीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
16. ॐ ह्रीं अर्हं णमो चउदसपुव्वीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
17. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठंगमहाणिमित्तकुसलाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
18. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वइड्ढिपत्ताणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
19. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
20. ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
21. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्णसमणाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
22. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगासगामिणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
23. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसीविसाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
24. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
25. ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
26. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

27. ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्ततवाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
28. ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
29. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
30. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
31. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणपरक्कमाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
32. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरबंभचारिणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
33. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमोसहिपत्ताणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
34. ॐ ह्रीं अर्हं णमो खिल्लोसहिपत्ताणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
35. ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लोसहिपत्ताणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
36. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विप्पोसहिपत्ताणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
37. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
38. ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणोबलीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
39. ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचनबलीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
40. ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायबलीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
41. ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीरसवीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
42. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
43. ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुरसवीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
44. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमियसवीणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
45. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीणमहाणसाणं अर्घं नि. स्वाहा ।
46. ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
47. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सिद्धायदणाणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
48. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वसाहूणं अर्घ्यं नि. स्वाहा ।

जाप:– ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं अर्हं श्रीवृषभनाथतीर्थंकराय नम: ।
अनेन मंत्रेण लवङ्गैरष्टोत्तरशतं (108) जाप्यं विधेयम् ।।

समुच्चय महार्घ

मैं देव श्री अर्हन्त पूजूँ सिद्ध पूजूँ चाव सों।
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ साधु पूजूँ भाव सों।।
अर्हन्त–भाषित बैन पूजूँ द्वादशांग रची गनी।
पूजूँ दिगम्बर गुरुचरण शिव हेत सब आशा हनी।।
सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि दयामय पूजूँ सदा।
जजि भावना षोडश रत्नत्रय, जा बिना शिव नहिं कदा।।
त्रैलोक्य के कृत्रिम अकृत्रिम चैत्य–चैत्यालय जजूँ।
पन मेरु नन्दीश्वर जिनालय खचर सुर पूजित भजूँ।।
कैलाश श्री सम्मेद श्री गिरनारगिरि पूजूँ सदा।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि और तीरथ सर्वदा।।
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ बीस क्षेत्र विदेह के।
नामावली इक सहस–वसु जय होय पति शिवगेह के।।
जल गंधाक्षत पुष्प चरु दीप धूप फल लाय।
सर्व पूज्य पद पूज हूँ बहु विधि भक्ति बढ़ाय।।

ॐ ह्रीं भावपूजा–भाववंदना–त्रिकालपूजा–त्रिकालवंदना करै करावै भावना भावै श्री अरिहन्त जी, सिद्धजी, आचार्य जी उपाध्याय जी सर्वसाधुजी पञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः। प्रथमानुयोग–करणानुयोग–चरणानुयोग–द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः। दर्शन–विशुद्ध्यादि–षोडशकारणेभ्यो नमः। उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्मेभ्यो नमः। सम्यग्दर्शन–सम्यग्ज्ञान–सम्यक्चारित्रेभ्यो नमः। जल के विषै, थल के विषै, आकाश के विषै, गुफा के विषै, पहाड़ के विषै, नगर नगरी विषै, ऊर्ध्वलोक–मध्यलोक–पाताललोक विषै विराजमान–कृत्रिम–अकृत्रिम–जिनचैत्यालय–जिनबिम्बेभ्यो नमः। विदेहक्षेत्रे विद्यमानविंशति–तीर्थंकरेभ्यो नमः। पाँच भरत, पाँच ऐरावत दशक्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनबिम्बेभ्यो नम । नंदीश्वरद्वीपस्थ द्विपञ्चाशत जिनचैत्यालयेभ्यो नमः। पञ्चमेरु सम्बन्धी

अशीति जिन चैत्यालयेभ्यो नमः। श्रीसम्मेदशिखर–कैलाश–चम्पापुर–पावापुर–गिरनार–सोनागिर–राजगृही–शत्रुञ्जय–तारंगा–अहारजी – कुंडलपुर – नेमावर–चौरासि–मथुरादि–सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः। जैनबद्री–मूढ़बद्री–हस्तिनापुर–चन्देरी–पपोरा–अहारजी–अयोध्या–चमत्कारजी, महावीरजी, पद्मपुरी, तिजाराजी आदि अतिशयक्षेत्रेभ्यो नमः। ॐ ह्रीं श्री चारणऋद्धिधारी सप्तपरमर्षिभ्यो नमः।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपावन्तं श्रीवृषभादि–महावीरपर्यन्त–चतुर्विंशति–तीर्थंकर–परमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे भारतदेशे... प्रान्ते...नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे...मासे...शुभपक्षे... तिथौ... वासरे मुनि–आर्यिकाणां श्रावक–श्राविकानां सकलकर्मक्षयार्थं अनर्घपदप्राप्तये सम्पूर्ण–अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्तिपाठ भाषा

(शांतिपाठ बोलते समय पुष्प क्षेपण करते रहना चाहिये।)

शांतिनाथ मुख शशि उनहारि, शील गुणव्रत संयमधारी।
लखन एक सौ आठ विराजैं, निरखत नयन कमलदल लाजैं।।
पञ्चम चक्रवर्ति पदधारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिन नायक, नमो शान्तिहित शांति विधायक।।
दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा।
छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी।।
शान्ति जिनेश शान्ति सुखदाई, जगत्पूज्य पूजौ शिर नाई।
परम शान्ति दीजै हम सबको, पढ़ैं तिन्हें पुनि चार संघ को।।

पूजैं जिन्हें मुकुटहार किरीट लाके,
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके।।
सो शांतिनाथ वर वंश जगत्प्रदीप,
मेरे लिए करहिं शान्ति सदा अनूप।।

संपूजकों को प्रतिपालकों को, यतीनकों को यतिनायकों को।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेश को ले, कीजे सुखी हे जिन ! शान्ति को दे।।
होवै सारी प्रजा को, सुख बलयुत हो, धर्म–धारी नरेशा।
होवै वर्षा समै पै, तिलभर न रहे, व्याधियों का अन्देशा।।
होवै चोरी न जारी सुसमय वरतै हो न दुष्काल मारी।
सारे ही देश धारैं जिनवर–वृषको जो सदा सौख्यकारी।।

(निम्न श्लोक पढ़कर चन्दन छोड़ना चाहिए।)

घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज।
शान्ति करो सब जगत में, वृषभादिक जिनराज।।
शास्त्रों का हो पठन सुखदा, लाभ सत्संगती का।
सद्व्रतों का सुजस कहके, दोष ढाकूँ सभी का।।
बोलूँ प्यारे वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ।
तो लों सेऊँ चरण जिनके, मोक्ष जो लों न पाऊँ।।
तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में।
तब लौं लीन रहौं प्रभु, जब लौं पाया न मुक्ति पद मैंने।।
अक्षर पद मात्रा से, दूषित जो कुछ कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुड़ाहु भव दुख से।।
हे जगबन्धु जिनेश्वर, पाऊँ तव चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सु दुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

(कायोत्सर्गं करोम्यहम्)

विसर्जन

बिन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय।
तुम प्रसाद तैं परमगुरु, सो सब पूरन होय।।
पूजन विधि जानूँ नहीं, नहिं जानूँ आह्वान।
और विसर्जन हूँ नहीं, क्षमा करहु भगवान।।
मन्त्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव।।
आये जो जो देवगण, पूजे भक्ति प्रमान।
ते अब जावहूँ कृपाकर, अपने-अपने थान।।
श्री जिनवर की आशिका, लीजे शीष चढ़ाय।
भव-भव के पातक कटें, दुःख दूर हो जाय।।

।। यहाँ पर नौ बार णमोकार मन्त्र जपना चाहिये ।।

यज्ञ विसर्जन

सर्वे येऽपि समाहूता, जिन यज्ञ महोत्सवे।
तान्सर्वान् सविसृत्येत, भक्ति नम्र शिरः पुनः।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अर्हदादि परमेष्ठिनः अपराध क्षमापनं भवतु।
(पुष्प क्षेपण करें)

मण्डल विसर्जन

द्रुतविलम्बित

जगति शान्ति विवर्धनमहसां प्रलयमस्तु जिनस्तवनेन मे।
सुकृतबुद्धिरलं क्षमया युतो जिनवृषे हृदये मम वर्तताम्।।1।।

शार्दूलविक्रीडित

मोहध्वान्तविदारणं विशदविश्वोद्भासि दीप्ति श्रियं।
सन्मार्ग प्रतिभासकं विबुध सन्दोहामृता-पादकम्।।

श्री पादं जिनचन्द्र शान्तिशरणं सद्भक्ति मानौमि ते।
भूयस्तापहरस्य देव भवतो भूयात्पुनर्दर्शनम्।।2।।

अनुष्टुप्

मंगलार्थं समाहूता, विसर्ज्याखिल देवता:।
विसर्जनाख्य मंत्रेण, वितीर्य कुसुमाञ्जलिम्।।3।।

ॐ ह्रीं अस्मिन् बिम्ब/वेदी प्रतिष्ठा महोत्सवे आहूयमान देवगणा: स्वस्थानं गच्छन्तु अपराध क्षमापणं भवतु। (पुष्प क्षेपण करें)

मंगलध्वज विसर्जन

अनुष्टुप्

प्रमादाज्ञानदर्पाद्यै:, विहितं विहितं न युत्।
जिनेन्द्रास्तु प्रसादास्ते, सफलं सकलं च तत्।।1।।
अस्मिन् यज्ञे सुराहूता:, शिष्टार्हत्प्रभु पूजने।
इष्ट मस्माकमापाद्य, तुष्टा यान्तु यथायथम्।।2।।
इत्युक्त्वा ध्वजवेदिकायां पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

(ध्वजवेदी पर पुष्पक्षेपण करें ध्वजावरोहण करें।)

यज्ञदीक्षा समापन

बसन्ततिलका

यज्ञोचितं व्रत विशेषवृतोह्यतिष्ठन्,
यष्टा प्रतीन्द्रसहित: स्वयमे पुरावत्।
एतानि तानि भगवज्जिनयज्ञदीक्षा,
चिह्नान्यथैष विसृजामिगुरो: पदाग्रे।।

अथार्हत् पूजा समापन करणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं श्रीमच्छान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

(मुकुट, माला, यज्ञोपवीत आदि उतार दें)

पंच परमेष्ठी आरती

(रचयिता –आचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज)

बाजे छम छम छम छमाछम बाजे घुँघरू–बाजे घुँघरू,
हाथों में दीपक लेके आरती करूँ।

पहली आरति अरिहंताणं–2
कर्म घतिया चउ नासाणं–2
चारों गुण पाने गुण वंदना करूँ, हाथों में...।

दूसरी आरति सिरि सिद्धाणं–2
पाने मुक्तिफलं निव्वाणं–2
आठों गुण पाने गुण वंदना करूँ, हाथों में...।

तीसरी आरति आइरियाणं–2
पंचाचार निपुण समणाणं–2
बोधि गुण पाने गुण वंदना करूँ, हाथों में...।

चौथी आरति उवज्झायाणं–2
पच्चिस गुण धारी अप्पाणं–2
ज्ञान गुण पाने गुण वंदना करूँ, हाथों में...।

पाँचवीं आरति सव्व साहूणं–2
ज्ञान ध्यान तप लीन गुरूणं–2
समता गुण पाने गुण वंदना करूँ, हाथों में...।

बाजे छम छम छम छमाछम बाजे घुँघरू–बाजे घुँघरू,
हाथों में दीपक लेके आरती करूँ।

जिनागम पंथ प्रभावना फाउंडेशन

के अंतर्गत

जिनागम पंथ ग्रंथमाला

उद्देश्य

मूल जिनागम का संरक्षण, प्रकाशन, प्रचार–प्रसार
एवं लोकोपयोगी, धार्मिक–नैतिक साहित्य का
निर्माण व प्रकाशन

शुभाशीष/प्रेरणा

प.पू. श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महाराज

स्थापना ग्रंथमाला : 15 नवम्बर 2018, विमर्श उत्सव

कार्यालय : 116, भूता कम्पाउण्ड, इटावा रोड़, भिण्ड (म.प्र.)

भावलिंगी संत : एक नजर

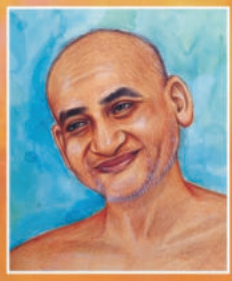

* प.पू. भावलिंगी संत, राष्ट्रयोगी श्रमणाचार्य श्री विमर्शसागर जी महामुनिराज एक ऐसे दिगम्बराचार्य हैं जिन्होंने पंथवाद के नाम पर बिखरती जैन समाज में अनादि–अनिधन 'जिनागम पंथ' का उद्घोष कर सामाजिक एकता का सूत्रपात किया है।
* जिनको सिद्धक्षेत्र अहार जी में अपनी निर्मल साधना से पंचमकाल में दुर्लभतम, शान्तिभक्ति की महान् सिद्धि प्राप्त हुई, यक्षों द्वारा की गई महापूजा, और नाम दिया 'भावलिंगी संत' एवं 'अहार जी के छोटे बाबा'।
* आचार्य भगवन् अमितगति स्वामी के 1000 वर्ष प्राचीन ग्रंथ "श्री योगसार प्राभृत" ग्रन्थ पर पूज्य गुरुदेव द्वारा प्राकृत भाषा में 'अप्पोदया'/'आत्मोदया' नामक वृहद टीका का सृजन किया गया है जो अपने आप में अनूठा इतिहास है।
* धर्म निरपेक्ष रूप से सम्पूर्ण भारत वर्ष में गुनगुनाई जाने वाली कालजयी रचना 'जीवन है पानी की बूँद' महाकाव्य के पूज्य श्री मूल रचनाकार हैं। इस कृति में गुरुदेव द्वारा अभी तक 5000 साधिक छंदों का सृजन किया गया है। गुरुदेव की इस कृति पर अनेक साधु–साध्वियों द्वारा नये–नये छंद जोड़े गये।
* पूज्य भावलिंगी संत आचार्य श्री विमर्शसागर जी ऐसे प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य है जिनकी रचना 'देश और धर्म के लिये जियो' को मध्यप्रदेश सरकार द्वारा कक्षा 11 की हिन्दी सामान्य की पुस्तक 'मकरंद' में प्रकाशित किया गयाहै।
* प.पू. भावलिंगी संत ऐसे प्रथम जैनाचार्य हैं जिन्होंने मौलिक रूप से पूर्णता नवीन 'विमर्श एम्बीशा' भाषा का सृजन कर समस्त भाषा मनीषियों को प्रभावित किया है।
* पूज्य गुरुदेव ऐसे प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य हैं जिन्होंने अशोकनगर (म.प्र.) सन् 2011 में मौलिक रूप से 'विमर्श लिपि' का सृजन किया है।
* देश की राष्ट्रवादी संस्था 'भारत विकास परिषद' शाखा विजयनगर (राज.) द्वारा गुरुदेव को 'राष्ट्रयोगी' अलंकरण से अलंकृत किया गया।

वर्तमान श्रमण संस्था में पूज्य गुरुदेव के संघ का अनुशासन प्रशंसनीय एवं अनुकरणीय है।

कहो गर्व से हम जिनागम पंथी हैं।

जिनागम पंथ, प्रकाशन

...शास्त्र विक्रय... ज्ञानावरणस्यास्रवा:
शास्त्र विक्रय ज्ञानावरण कर्म के आस्रव का कारण है।
(आचार्य अकलंक देव, राजवार्तिक)

NOT FOR SALE